ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 07 फरवरी 2016

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार 07 फरवरी 2016 से 13 फरवरी 2016

मा.कृ. –14 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 58, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. पटना में लगाया गया चरित्र निर्माण शिविर

डॉ. डी. राम डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, गोला रोड, दानापुर के प्रागंण में त्रिदिवसीय चरित्र निर्माण शिविर धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ।

ब्रह्मा डॉ प्रमोद योगार्थी जी के साथ श्री मनोज शास्त्री, श्री सत्योम् शास्त्री, श्री अरविन्द शास्त्री एवं श्रीमती अर्चना शास्त्री तथा श्री ओम प्रकाश आर्य के पौरोहित्य में यज्ञ–हवन समपन्न हुआ।

उद्घाटन समारोह में बिहार के कैबिनेट सचिव श्री ब्रजेश मेहरोत्रा (आई.ए.एस), श्री गुप्तेश्वर पाण्डेय (आई. पी.एस.) ए.डी. जी.पी. बिहार, भाई विरेन्द्र विधायक मनेर, प्रो. रणवीर नंदन विधान पार्षद ने शिविर की सफलता के लिए शुभकामनाएँ एवम् आशीर्वाद दिया। श्री इन्द्रजीत राय ने आगत अतिथियों के प्रति आभार व्यक्त किया तथा सहयोग के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। बच्चों के रंगारंग कार्यक्रमों ने सभी अतिथियों को मनमोह लिया।

इस शिविर में 14 डी.ए.वी. विद्यालयों से कक्षा पाँचवीं से सातवीं तक के लगभग 600 विद्यार्थियों के साथ

शिक्षक–शिक्षिकाओं ने सोत्साह भाग लेकर शिविर को सफल बनाया।

शिविरार्थी प्रातः 5 बजे उठकर नित्यक्रिया से निवृत हो योगाभ्यास, प्राणायाम कर प्रातःराश लेते, तदोपरान्त यज्ञ–हवन कर परिचर्चा सत्र में भाग लेते थे। तत्पश्चात् ज्ञानवर्धक विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन होता जिसमें शिविरार्थी उत्साह पूर्वक भाग लेते थे। शाम छः बजे से सामूहिक सन्ध्या कर भजनोपदेश का आनन्द शिविरार्थी लेते पश्चात् पुनः प्रेरक, मनभावन एवं ज्ञानवर्धक प्रतियोगिताओं का आयोजन होता था। रात्रि 9:30 बजे सभी शिविरार्थी विश्राम करने चले जाते थे।

माननीय शिक्षामंत्री श्री अशोक चौधरी तथा भाजपा नेता श्री गंगा प्रसाद पूर्वविधान पार्षद् एवं श्री राज किशोर यादव उपाध्यक्ष नगर परिषद् दानापुर ने शिविर का दौरा किया तथा डी.ए.वी. संस्थाओं की प्रंशसा करते हुए अधिक से अधिक शिविर लगाकर चरित्रवान विद्यार्थी बनाने पर बल दिया।

समापन सत्र के मुख्य अतिथि के रूप में आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मन्दिर मार्ग नई दिल्ली के सभा मंत्री श्री एस.के. शर्मा जी ने 51 कुण्डीय विश्वशान्ति महायज्ञ के पश्चात् सभी यज्ञकर्त्ता तथा शिविरार्थियों पर पुष्प वर्षा कर आर्शीवाद दिया।

श्री शर्मा जी ने पटना में महर्षि दयानन्द के तीन बार आगमन की चर्चा करतें हुए यहाँ के लोगों को प्रेरित किया। स्वामी श्रद्धानन्द के जीवनी पर चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि उनका जीवन सभी शिक्षकों के लिए प्रेरणा स्रोत रहा है। श्री शर्मा जी ने सभा प्रधान आर्यरत्न श्री पूनम सूरी जी की भावनाओं को व्यक्त करते हुए ईश्वरीय गुणों को धारण कर संस्था हित में समर्पित होकर कर्मचारियों तथा अधिकाारियों को काम करने को कहा। शर्मा जी ने स्वामी दयानन्द सरस्वती की प्रेरणा से सन् 1878 ई. में स्थापित आर्य समाज दानापुर कैंट का भी अवलोकन किया।

शिविर में मंत्रोच्चारण, समूह भजन, समूह राष्ट्रगीत, समूह लोकनृत्य, रंगोली, कार्ड निर्माण, एकल नाट्य, कक्ष सज्जा, डायरी लेखन प्रतियोगिताओं का अयोजन किया गया।

इस सुअवसर पर बिहार उप सभा के प्रधान डा. यू. प्रसाद, मंत्री–श्री एस.के. झा, बिहार आर्ययुग समाज के प्रधान–श्री के. के. सिन्हा विशेष रूप से उपस्थित रहे। सुश्री अंजली सहा. क्षेत्रीय निदेशक डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बेगुसराय प्रक्षेत्र ने भी शिविरार्थियों को शुभकामनाएँ दी।

डी.ए.वी. रणधीर सिंह लुधियाना नगर में लगा नैतिक शिक्षा प्रशिक्षण शिविर

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली की विशेष योजना के अन्तर्गत लुधियाना के डी.ए.वी पब्लिक स्कूल रणधीर सिंह नगर में एक नैतिक शिक्षा प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। श्री.एस.के. शर्मा (मंत्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, दिल्ली व डायरेक्टर पब्लिकेशनस, डी.ए.वी.एम.सी. दिल्ली) इस हवन के मुख्य यजमान रहे। श्री मती एवं श्री सतपाल आर्य (सहमंत्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, दिल्ली) ने उनका साथ दिया। साथ ही डॉ. मोहन लाल शर्मा (प्रधान, आर्य युवा समाज, पंजाब) श्री धर्मपाल जैन (फांउडर मैंबर स्थानीय मैनेजिंग कमेटी), स्कूल प्राचार्या श्रीमती जे. के. सिद्धू तथा अन्य डी.ए.वी. संस्थानों के प्राचार्य श्री रवि कुमार शर्मा, श्रीमती पूनम कपाही, श्रीमती अनिता वर्मा भी इस दैनिक हवन मे यजमान रहे। स्कूल की सबसे वरिष्ठ अध्यापिका श्रीमती उर्मिल भारद्वाज और सबसे कनिष्ठ अध्यापिका सुश्री विनीत भी यजमान के रूप में शामिल रहीं।

पहले दिन श्री सतपाल जी आर्य इस कार्यशाला के मुख्य अतिथि रहे। श्री राजेन्द्र विद्यालंकार जी (ओ.एस.डी., राज्यपाल हिमाचल प्रदेश) कार्यशाला के मुख्य वक्ता रहे। दो दिवसीय कार्यशाला के प्रथम सत्र के विषय 'आर्य मान्यताएँ' के अंतर्गत मुख्य वक्ता ने अपने विचार रखते हुए कहा कि देश भर में फैली डी.ए.वी. संस्थाओं से जुड़े 20 लाख से अधिक छात्रों और 60 हजार शिक्षकों के माध्यम से हम देश को ऐसे युवाओं का योगदान दे सकते है, जिनमे आस्तिकता, राष्ट्रीयता, सेवा व समर्पण के श्रेष्ठ गुण भरे हों। उन्होंने अध्यापकों का आह्वान करते हुए उन्हें अपने इतिहास, लक्ष्यों और संकल्पों को स्पष्टता से जानने की प्रेरणा दी। साथ ही समाज में फैले अंधविश्वासों, भ्रांतियों की ओर ध्यान आकर्षित कराते हुए सत्यता, धार्मिकता के सरोकारों का वास्तविक रूप उजागर किया।

दसरे दिन श्री जे.पी. शूर (मंत्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब व डायरेक्टर पब्लिक स्कूलज) दैनिक हवन के मुख्य यजमान और मुख्य अतिथि रहे। श्री कमलजीत सिंह और सबसे कनिष्ठ अध्यापक प्रदीप कुमार भी यजमान के रूप मे सम्मिलित हुए।

डॉ. वागीश ने ईश्वर, जीव, प्रकृति, कर्मफल' के अंतर्गत अपने विचार प्रकट करते हुए अध्यापक वर्ग को वैदिकता व मनुष्यता के बारे में जानकारी दी। उन्होंने कहा कि छात्रों पर ज्ञान थोपने की बजाय उन्हें खुद निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए प्रेरित करना चाहिए। छात्रों में वैदिकता व मानवता के संस्कार रोपित किये जाएँ ताकि एक सुदृढ़ समाज का निर्माण हो सके। उन्होने विज्ञान और अध्यात्म को एक दूसरे का पूरक बताते हुए कहा कि शिक्षकों को अपने छात्रों में तार्किक चिंतन की प्रवृति का विकास करना चाहिए।

अंतिम चरण में अध्यापकों ने सक्रिय रूप से भाग लेते हुए धर्म, दर्शन, अध्यात्म, विज्ञान संबंधी विषयों पर अपने प्रश्न पूछे व विचार–विमर्श भी किया। कार्यशाला के दौरान 'प्रति पुष्टि प्रोफार्मा' के माध्यम से उपस्थित शिक्षकगण ने इस कार्यशाला से प्राप्त ज्ञान–उपलब्धि व अनुभवों को साझा किया।

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 07 फरवरी, 2016 से 13 फरवरी, 2016

ब्रह्म-कवच से रक्षित

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

परीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाहं, कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च।
मा मा प्रापन्निषवो दैव्या याः, मा मानुषीरवसृष्टा वधाय।।

अथर्व17.1.28

ऋषिः **ब्रह्मा।** देवता **आदित्यः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**अहं**) मैं (**ब्रह्मणा**) ब्रह्म–रूप (**वर्मणा**) कवच से [तथा] (**कश्यपस्य**) द्रष्टा आत्मा की (**ज्योतिषा**) ज्योति से (**वर्चसा च**) और वर्चस्विता से (**परीवृतः**) आच्छादित [होऊँ]। (**याः**) जो (**दैव्याः**) दैवी (**इषवः**) बाण हैं, वे (**मा**) मुझे (**मा**) मत (**प्रापन्**) प्राप्त हों, (**मा**) न ही (**बधाय**) वध के लिए (**अवसृष्टाः**) छोड़े हुए (**मानुषी**) [इषवः] मानुषी बाण [प्राप्त हों]।

●संसार में रहते हुए मुझे अनेक दैवी और मानुषी विपत्तियों से संघर्ष करना है। देखो, कैसे–कैसे दैवी बाणों का मुझपर प्रहार हो रहा है। कभी भूकम्प आ रहे हैं, कभी सर्वनाशिनी आँधियाँ चल रही हैं, कभी असमय ओले वरस रहे हैं, कभी ज्वालामुखी फूट रहे हैं, कभी अतिवृष्टियाँ और अनावृष्टियाँ हो रही हैं, कभी दुर्भिक्ष पड़ रहे हैं, कभी नदियों में विनाशलीला मचा देनेवाली बाढ़े आ रही हैं, कभी उल्कापातों की झड़ी लग रही है कभी भूमि फट रही है, कभी ऋतुओं में अव्यवस्था हो रही है, कभी महामारियाँ फैल रही हैं। इन सब दैवी बाणों के प्रहार मुझ मानव को क्षणभर में नष्ट–भ्रष्ट कर सकते हैं। दूसरी और मानुषी बाणों पर, मनुष्य द्वारा उत्पन्न की गई विपत्तियों पर भी दृष्टिपात करो। तलवारें खनखना रही हैं, तोपें गोले बरसा रही हैं, बन्दूको की गोलियाँ सिर पर से निकट रही है, संधातक विस्फोट किये जा रहे हैं। ऐटम–बम छोड़े जा रहे हैं, विषैली गैसें फैलाई जा रही हैं, नये–से–नये संहारक आविष्कार किये जा रहे हैं। इन सब मानुषी बाणों से भी मैं विपद्ग्रस्त तथा जर्जर हो गया हूँ, और मानव–जाति संहार के कगार पर खड़ी प्रतीत हो रही है।

इस प्रकार के दैवी और मानवी बाणों के प्रहार से बचने का एक उपाय यह है कि मैं ब्रह्म का कवच धारण कर लूँ। ब्रह्म का कवच पहनते ही हृदय में धैर्य, आश्वासन और बड़े का सहारा प्राप्त कर लेने का सन्तोष जागृत होगा और जैसे सेनापति के साथ होने पर सैनिकों में उत्साह की लहरें हिलोरें मारती रहती हैं वैसे ही मेरे अन्दर संकटो से जूझने का उत्साह बना रहेगा। इन बाणों से आत्मा–रक्षा का दूसरा उपाय यह है कि मैं द्रष्टा आत्मा (कश्यप) की ज्योति और वर्चस्विता से अनुप्राणित हो जाऊँ। मेरे आत्मा में जो शक्ति निहित है, उसे पहचानूँ। आत्मा में जो अमरता की ज्योति जग रही है उसके दर्शन करुँ तथा इस भावना को अपने अन्दर जगाऊँ कि आत्मा अमर है, अतः संघर्षों से घबराना क्या! इस प्रकार ब्रह्म–कवच और कश्यप आत्मा की ज्योति से आच्छादित होकर मैं समस्त दैवी और मानुषी वाणों से आत्म–रक्षा में समर्थ हो सकता हूँ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित समी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु - भक्ति

● महात्मा आनन्द स्वामी

असार है यह संसार, और फिर यह शरीर तो सर्वथा क्षणभंगुर है। मनुष्य को चाहिए कि अनित्य–शरीर और पदार्थ को प्राप्त होके क्षणभंगुर जीवन में धर्माचरण के साथ नित्य परमात्मा की उपासना कर आत्मा और परमात्मा के संयोग से उत्पन्न हुए नित्य सुख को प्राप्त हो। जीवन का उद्देश्य है "भक्ति" अनित्य शरीर में रहते हुए दो नित्य ज्योतियों का मिलाप–आत्मा और परमात्मा का योग।

जब तक शरीर स्वस्थ है, जब तक वृद्धावस्था दूर है, जब तक इन्द्रियों की शक्ति कम नहीं हुई है, आयुष्य भी क्षीण नहीं हुआ है, तब तक बुद्धिमान पुरुष को उचित है कि अपने कल्याण का प्रयत्न भलीभांति करे। अमर जीवात्मा और मरने वाले शरीर का सम्बंध इसलिए किया गया है ताकि यह "अमर" दूसरे महाअमर को जो आनन्दस्वरूप है, पा सके। शरीर का स्वस्थ और पुष्ट होना नितान्त आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

अब आगे...

मैं यह भी नहीं कहता कि शरीर को संसार के भोगों से वंचित रखिये। नहीं, जितने भोगे भोग जा सकते हों भोग लें, परन्तु यह स्मरण रखिये–

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्तास्तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।
कालो न यातो वयमेव यातास्तृष्णा न जीर्णा मयवेव जीर्णाः।।

"मैंने विषयो का भोग नहीं किया किन्तु विषयों ने ही मुझे भोग लिया। मैंने तप न किया, पर तपों ने ही मुझे तप डाला। काल नहीं बीता, हम ही बीत गये। हमारी तृष्णा बूढ़ी न हुई, हम ही बूढ़े हो गये।"

हमने भोग न भोगा,
भोगों ने भुगताया हमें कहीं।
हमने तप नहीं किया,
तपों ने हमें तपाया न्यून नहीं।।
काल न बीता हम ही,
किया व्यर्थ ही जग–व्यवहार।
तृष्णा बूढ़ी नहीं हुई,
हम गलपत पहुँचे अन्त किनार।।

तेन त्यक्तेन–

सांसारिक भोगों के भोगने से कोई रोकता नहीं है, न ही कोई यह कहता है कि सब–कुछ छोड़कर अकर्मण्य हो जाओ, गार्हस्थ्य आश्रम त्यागकर किसी वन में जा बैठो। कभी कोई आपको यह उपदेश न देगा कि संसार के बन्धनों, झंझटों और कष्टों से घबराकर भीरु बन जाओ। कहने का तात्पर्य यह है कि यजुर्वेद के निम्नलिखित मन्त्र को सदा सम्मुख रखो–

'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।

"तप–त्याग से उपभोग कर, मत ललचा, (ज़रा सोच तो सही) यह धन किसका है?" त्यागभाव से भोग कीजिये। मैं आजकल निज़ाम–सरकार की गुलबर्गा जेल में कैदी हूँ। इस जेल के वार्ड नम्बर 8 में रहता हूँ। अब यह वार्ड मेरे ही नाम से विख्यात हो गया है। महात्मा नारायण स्वामी जी जिस वार्ड में रहते हैं, वह भी उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हो गया है। राजगुरु पं. धुरेन्द्र शास्त्री Segregation-ward में रहते हैं, परन्तु अब उसे सेग्रेरेगेशन वार्ड नहीं कहा जाता, शास्त्री जी का वार्ड कहा जाता है। सब सत्याग्रही जेल के भगवे रंग के कपड़े पहनते हैं, जेल के 'तसले' में दाल लेते हैं, 'चम्पू' में पानी पीते हैं, जेल का टाट और कम्बल नीचे बिछाते हैं, जेल की इन सब वस्तुओं का प्रयोग करते हैं, परन्तु इन्हें अपना नहीं समझते। अपनी कैद के दिन गुज़ारकर हम चल देंगे और ये लम्बे कमरे, ये बरतन, ये टाट और कम्बल यहीं छोड़ जायेंगे। जब हमें मुक्त किया जायगा तो हम इन वस्तुओं से लिपट–लिपटकर रोयेंगे थोड़े ही! अपितु प्रसन्नता से इन्हें छोड़कर जेल से चले जायेंगे। इसी को कहते हैं 'त्यक्तेन भुञ्जीथा'। एक उदाहरण देखिये–एक यात्री यात्रा के दिनों में किसी धर्मशाला अथवा सराय में ठहरता है। वहाँ कुछ घण्टे अथवा कुछ दिन रहता है। वहाँ के सारे पदार्थ प्रयोग करता है। पलँग पर सोता है, बर्तनों में खाना पकवाता है, कुर्सियों पर बैठता है, साथ ही वाटिका से पुष्प लेता है, फल खाता है, दूसरे यात्रियों से वार्तालाप करता है, खेलता है, किन्तु उसके मन में यह कभी नहीं आता कि मैं इन सब वस्तुओं का स्वामी हूँ और मैं इन सबको उठाकर साथ लेता चलूँ। वह उन वस्तुओं का भोग तो करता है परन्तु उनमें लिप्त नहीं हो जाता; अपने–आपको न उसका स्वामी समझता है, और न ही उनका दास। स्वामी–भाव और दास–भाव, इन दोनों से ऊपर रहता है। यदि उसने लोभ किया तो फँस गया, पकड़ा गया और जकड़ा गया।

मन लोभ करे भी तो क्यों? आखिर यह धन है ही किसका? क्या रावण का

यह धन था? क्या कंस इसका स्वामी था? क्या औरंगजेब और कारूँ के पास यह था? मुगल बादशाहों का यह बना या किसी और का? किसी का भी नहीं भोले यात्री, किसी का भी नहीं! यह तो केवल भगवान् का है। तू इसे कितना एकत्र कर लेगा और क्या ऐसा करने से तू सुखी हो सकेगा? यदि ऐसा होता तो आधुनिक काल का सबसे बड़ा धनी अमेरिकन अपने–आपको सबसे बड़ा दुःखी न बतलाता। मिस्टर हेनरी फोर्ड के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उसकी वार्षिक आय 2400000 डॉलर है अर्थात् 80000 पौंड या सोलह लाख रुपया दैनिक। इस समय उसके पास नकद तथा सम्पत्ति 48 करोड़ पौंड की है। परन्तु उसका धन उसे कोई विशेष सुख नहीं दे रहा। इसलिए केवल धन सुख का कारण नहीं।

इसका अर्थ यह नहीं कि मैं धनोपार्जन के विरुद्ध हूँ। उतना धन कमाइये, जितना धर्म तथा न्याय से कमा सकते हैं। पाप से धनोपार्जन न कीजिये और दूसरों का अधिकार छीनकर मत समझिये कि आप सुखी हो सकेंगे। अथर्ववेद कहता है–

अमा कृत्वा पाप्मानं यस्तेनान्यं जिघांसति।
अश्वानस्तस्यां दग्धायां बहुलाः फट् करिक्रति।।
(4–18–3)

'जो पाप करके, उसके द्वारा दूसरे को हानि पहुँचाना चाहता है (वह भूल कर रहा है, शीघ्र ही) बहुत–से पत्थर उसके सिर पर फट–फटकर गिरेंगे।'

पाप करनेवाले को इस धोखे में नहीं रहना चाहिए कि वह दूसरों को धोखा देकर स्वयं ही बचा रहेगा। समय आनेवाला है, जब ये पाप पत्थर बनकर उसका सिर फोड़ देंगे; इसलिए धन के लिए पाप न कीजिये; इसे एकत्र तो कर लीजिये लेकिन, इसी को अपना प्राण न समझ लें। इसी के साथ बिक मत जाइये।

तैरने और डूबनेवाली नौकाएँ–

नदी के किनारे खड़े होकर आपने देखा होगा कि नदी में कुछ नौकाएँ तैर रही होती हैं और कुछ डूबी हुई। मैं नौका का विरोधी नहीं हूँ और न ही उसके तैरने का विरोध करता हूँ। मै हूँ विरोधी उनके डूब जाने का। उनके तैरने और डूब जाने का क्या कारण है? तैरनेवाली नौकाओं में छेद न होने के कारण उनमें पानी आ नहीं सकता। छोटा–मोटा छेद होने से जो पानी सूराख की राह अन्दर आ भी गया, उस बाहर फेंका जा सकता है। इसलिए ऐसी नौकाएँ न केवल स्वयं तैरती हैं अपितु दूसरे यात्रियों को भी पार ले जाती हैं। जो डूब गई हैं, उनमें छेद हो जाने से इतना पानी भर गया है कि वे अपने को पानी से ऊपर न रख सकीं। इसलिए अब न स्वयं तैरने के योग्य रही हैं और न दूसरों ही को पार ले जाने में समर्थ हैं। धन की नदी में छलाँग लगाने में कोई हानि नहीं। खूब धन कमाइये, परन्तु ध्यान रखिये कि धन का पानी मन में न जाने पाये। यदि यह चला गया तो फिर डूबना ही होगा। धन में हम तैरें; धन हमारे ऊपर न तैरने लगे। बस, इतनी–सी बात से जीवन बिगड़ने की बजाय सुधरने लगता है। तब धन देखकर मोह या लोभ पैदा नहीं होता; और जब मोह नहीं तो फिर आनन्द–ही–आनन्द है, सुख–ही–सुख है। एक बार एक शिष्य ने अपने गुरु से प्रश्न किया–'सुख किसे प्राप्त होता है?'

गुरु ने उत्तर दिया–'जिसका हृदय शान्त है।'

'हृदय किसका शान्त है?'
'जिसका मन चंचल नहीं।'
'मन किसका चंचल नहीं?'
'जिसे किसी वस्तु की अभिलाषा नहीं।'
'अभिलाषा किसे नहीं है?'
'जिसे किसी वस्तु में आसक्ति नहीं।'
आसक्ति किसे नहीं?'

गुरु जी ने शान्त–स्निग्ध मुद्रा से कहा–'जिसकी बुद्धि में मोह नहीं है।'

चाह मिटी चिन्ता गई, मनुआ बे–परवाह।
जिनको कछु ना चाहिये, सोई शाहन शाह।।

यह सब–कुछ स्पष्ट हो जाने और यह मालूम हो जाने पर कि संसार असार है और जिस शरीर में हमें रखा गया है, वह भी क्षणभगुर है, हमारा कर्त्तव्य यह हो जाता है कि अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इस संसार और इस शरीर से जितना लाभ उठा सकें उठायें, और वह लाभ यही है कि अपनी मनोवृत्ति भगवान् के भक्तों की–सी बनायें–

श्वास–श्वास पर ओम् कह,
वृथा जन्म मत खोय।
क्या जाने इस श्वास को,
आवन होय न होय।।

भगवान् की भक्ति में खोकर, शान्त और शीतल मन से जरा ध्यान लगाकर सुनिये–कवि कितने मधुर, आकर्षक स्वर में आपको चेता रहा है–

सुमिरन कर मन ओम् नाम,
दिन नीके बीते जाते हैं!
पाप–गठरिया सिर पर भारी,
पग नहीं आगे जाते हैं।
मात–पिता पति कुल धन दारा,
संग नहीं कोई जाते हैं।
दुनिया दौलत माल खज़ाना,
काम नहीं कुछ आते हैं।
सुमिरन कर मन ओम् नाम,
दिन नीके बीते जाते हैं!
परमगति कैसे मिलेगी

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो
योगधारणाम्।।
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।।
(गीता 8,12–13)

"सब इन्द्रियों के द्वारों को रोककर (अर्थात् इन्द्रियों को विषय से हटाकर) तथा मन को हृदेश में स्थिर करके और अपने प्राण को मस्तक में स्थापन करके, योगधारण में स्थित हुआ, जो पुरुष ओ३म् इस एक अक्षर–रूप ब्रह्म को उच्चारण करता हुआ और उसी का चिन्तन करता हुआ शरीर का त्याग कर जाता है, वह परुष परमगति को प्राप्त होता है।"

"सब इन्द्रियों के द्वारों को रोककर (अर्थात् इन्द्रियों को विषय से हटाकर) तथा मन को हृदेश में स्थिर करके और अपने प्राण को मस्तक में स्थापन करके, योगधारण में स्थित हुआ, जो पुरुष ओ३म् इस एक अक्षर–रूप ब्रह्म को उच्चारण करता हुआ और उसी का चिन्तन करता हुआ शरीर का त्याग कर जाता है, वह परुष परमगति को प्राप्त होता है।"

परन्तु यह अवस्था अन्त समय में तभी प्राप्त हो सकती है जब जीवन–काल में इसका अभ्यास किया हो अतएव सारा काम छोड़कर भी इसका अभ्यास करो।

दुःखों का नाश कैसे होगा?

यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः।
तदा देवमविज्ञाय दुःखस्यान्तो भविष्यति।।
(श्वेता. 6–20)

जब लोग चर्म की नाईं आकाश को लपेट सकेंगे, तब प्रभु के जाने बिना दुःख का अन्त होगा।

शेष अगले अंक में....

जन–जन के नायक नेता जी सुभाष चन्द्र बोस

● डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह

सुभाष चन्द्र बोस जी का जन्म सन् 1897 की 23 जनवरी को हुआ था। पिता का नाम श्री जानकी नाथ बसु, माता का नाम श्रीमती प्रभावती देवी था। इनकी जन्म स्थली चौबीस परगने में कोदलिया ग्राम थी। नेता जी के पिता कटक में सरकारी वकील थे। सुभाष चन्द्र बोस के सात भाई व छह बहनें थीं। माता प्रभावती धर्म परायण व दान शील थीं। इन्हीं का प्रभाव इनकी सन्तानों पर पड़ा। पिता के अन्दर देश प्रेम की भावना थी। इनके पिता के पास धन वैभव की कोई कमी नहीं थी, प्रारम्भिक शिक्षा प्रोटेस्टैण्ट यूरोपियन स्कूल में हुई उच्च शिक्षा हेतु इंग्लैण्ड गए। वहां एक से एक अधिक धनी मित्र मिले जो होटल आदि में जाते थे परन्तु सुभाष चन्द्र बोस उनसे अलग विचारों के व्यक्ति थे। धन का दुरुपयोग नहीं करते थे। वह इंग्लैण्ड के लोगों को देखते थे कि किस प्रकार से स्वतन्त्रता पूर्वक स्वच्छन्द होकर रह रहे हैं। वह यह देखकर सोचकर दुखी होते थे कि उनका देश भारत परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है। उन्होंने वहां से आई.सी.एस. की परीक्षा पास की तथा कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी से फिलासफी की डिग्री भी ली थी परन्तु इस ज्ञान को लेकर वह ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सेवा नहीं करना चाहते थे। वह अपना जीवन भारत माता के चरणों में अर्पित करना चाहते थे।

सन् 1921 में महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन चलाया। आई.सी.एस. की पदवी को छोड़ वह कॉंग्रेस की राजनीति में एक सेवक की भांति आ गए। जापान ने ब्रिटिश सेना के बीस हजार से अधिक भारतीय सैनिकों को बन्दी बना लिया था। रास बिहारी बोस ने उन भारतीय सैनिकों को मुक्त करा कर आजाद हिन्द फौज के नाम से एक सशस्त्र बल तैयार कर लिया। उस सेना का नेतृत्व सुभाष चन्द्र बोस ने संभाला और नेता जी ने 24 अक्टूबर 1943 को इंग्लैण्ड व अमेरिका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। सिंगापुर में स्वतन्त्र आजाद हिन्द सरकार की स्थापना कर ली। जापान, जर्मन व इटली ने इस सरकार को मान्यता दे दी। आजाद हिन्द सेना ने 30 दिसम्बर 1943 को अन्डमान निकोबार द्वीप समूह पर विजय प्राप्त कर ली। पोर्ट ब्लेयर में आजाद हिन्द सेना का ध्वज फहरा दिया। इसके पश्चात् असम की सीमा के मर्डोक चौकी पर कब्जा किया तथा तत्कालीन असम के ही कोहिमा, माणिपुर व विष्णुपुर पर विजय प्राप्त की। आजाद हिन्द सेना की प्रेरणा से ही उस क्रूर अंग्रेजी शासन की जल थल वायु सेना ने भी गुलामी के विरोध में विद्रोह किया। चारों ओर बगावत होने लगी। तभी से अंग्रेज सरकार लड़खड़ाने लगी थी।

23 जनवरी को नेता जी का जन्म दिन मनाने का सिंगापुर में निर्णय लिया गया। यह जन्म दिन विशेष रूप से मनाया गया था यह समाचार पूरे देश में घर घर में फैल गया। नेता जी को बच्चा बच्चा चाहता था उनके इशारे पर लोग मर मिटने को तैयार रहते थे। क्योकि नेता जी की अटूट श्रद्धा व देश भक्ति को जन जन जानता था। घर घर नेता जी की वीरता बहादुरी के गीत गाए जाते थे। लोगो में भी देश प्रेम उमड़ते हुए सागर की भांति हिलोरें ले रहा था। जन्म दिन में भाग लेने पंजाबी, गुजराती, मराठी स्त्री–पुरुष सज धज कर आए। इस दिन

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

शांति के आठ सूत्र

● जीवन लाल आर्य

ओं नमः शम्भवाय च, मयोभवाय च, नमः शङ्कराय च, नमः शिवाय च, शिवतराय च।

य. 16.41.

हे प्रभो! आप हमें शान्ति, आरोग्य सुख और आनन्द प्राप्त करायें, हम आपको बारम्बार नमन् करते हैं। प्रश्नः– यह 'शान्ति' है क्या! शान्ति का सीधा सम्बन्ध 'सुख विशेष' से है। और यह (1) सुख–विशेष इन्द्रियों का विषय है, जो बाह्य पदार्थों का है। पर 'शांति' तो अन्तःकरण का विषय है, इसे 'आनन्द' के नाम से भी पुकारा जा सकता है। सो 'शान्ति' शब्द का अर्थ हुआ "जब मन किसी भी रूप में किसी से भी विचलित न हो, अर्थात् उसमें किसी भी तरह की उथल–पुथल न हो।" यही है शान्ति का वास्तविक स्वरूप। 'अथ शान्ति–करणम्' के 28 मन्त्रों में भी यही प्रार्थना की गई है कि हे प्रभो! जो भी पदार्थ हम जीवन में धारण करें वे सभी हमें शान्ति देने वाले हों। फिर भी हम वहीं के वहीं। आमतौर पर हम 'मन' को अति चंचल मानते हैं और सुषुप्ति अवस्था में भी यह भागता ही रहता है। क्या कभी हमने सोचा है? 'मैं कौन हूँ! 'मैं इस भू पर क्यों आया हूँ! मेरा लक्ष्य क्या है? और विचार करें कि इससे हम मात्र 'भौतिक सुख' ही प्राप्त कर सकते हैं जो क्षणिक होता है। क्योंकि हम 'मूल' से भटक गए है।

यह पञ्च महाभूतों के संघात से बना शरीर जो मिटट्ी का पुतला है, और एक दिन मिट्टी में ही मिल जाएगा। कभी सोचा है इस मिटट्ी के बारे में? कितनी शान्ति है इसमें। इसी से हमें सब कुछ (अर्थात् सभी पदार्थ) मिलता है और यह चक्र ऐसे ही चलता रहेगा। सो हमें 'शान्ति' की खोज भी इस मिटट्ी के साधनों से ही करनी होगी। सीधी सी बातः– जब होश आया तभी संभल जाओ।

"न तो देर है–न अंधेर है–यह सब हमारे कर्मों का ही खेल है"

'शान्ति'–आत्मा और मन का स्वभाविक गुण है। (1) 'प्राण–साधना':– (मन की साधना) 'प्राण और आत्मा' के मिष से यह शरीर रूपी जीवन है। सो सर्वप्रथम प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में 'सुख आसन' स्थिर करें–बैठना सीखें और प्राणायाम द्वारा अपने श्वासों की गति को व्यवस्थित करें। पातञ्जल योग में केवल चार प्राणायामों का ही उल्लेख मिलता है जो हैं बाह्य कुम्भक, अन्तः कुम्भक, स्तम्भवृति और बाह्याभ्यन्तरा प्राणायाम। बाकी सभी उप–प्राणायाम में आते हैं। सो सुख आसन स्थिर करके नाड़ी शोधन क्रिया के लिए अनुलोम–विलोम (गर्मियों में चन्द्र भेदी) शीतली, बाह्य एवं अन्तः कुम्भक प्राणायाम द्वारा ही यह चंचल मन जो स्वभाव से 'शान्त' है–बाह्य वृत्ति रुकने पर यह भी (मन) वहीं टिकने लग जाता है। और जैसे–जैसे आपके श्वासों की गति यवस्थित हो जाए तुरन्त ले जाएं अपने 'ध्यान' को नासिका के अग्रभाग पर–अपने श्वासों पर टिकाएं। आँखें कोमलता से बन्द रखनी हैं, कमर और रीढ़ सीधी। यहाँ हमें अपने श्वासों के प्रति साक्षी होना है–केवल जागरूक होना है। हर एक श्वास के साथ अन्दर जाएं और हर प्रश्वास के साथ बाहर आएं। इस निरन्तरता को बनाए रखना है। ध्यान रहे यहां हम 'प्राणायाम' नहीं कर रहे हैं–क्योंकि हमें कर्त्ता नहीं बनना है, कर्त्ता बनने पर मन को काम मिल गया–और मन तुरन्त उलझ जाता है। सो हमें हर श्वास के प्रति अपनी सजगता बनाए रखनी है–बस अभ्यास करते–करते जैसे ही साक्षी भाव उदय हुआ–शान्ति का भाव भी मन में तुरन्त उत्पन्न होगा। क्योंकि इस समय हमारे श्वास व्यवस्थित हो चुके हैं। नित्य 15–20 मिनट के निरन्तर अभ्यास से हरेक श्वास 'दृढ़ और सूक्ष्म' होता जाएगा। मात्र 10–15 दिनों में ही 'शान्ति' के सूक्ष्म बीज फूटन लगेंगे और हमें अपनी अन्तः शक्ति का आभास भी होने लगेगा।

"MEDITATION IS THE ONLY WAY TO GET RID OFF ALL STRESSES."

(2) "स्वः चिन्तन–संकल्प"–आत्म चिन्तन–आत्म निरीक्षण। आँखें कोमलता से बन्द रखें और अपने अन्तःकरण में झाँकें–देखें अपने स्वरूप को, इसके अतिरिक्त और कुछ न सोचें। इस शरीर के अन्तःकरण में भी इस ब्रह्माण्ड का ही वास है। कितनी सुन्दर रचना है, किस तरह से प्रत्येक अंग जैसे हृदय की धड़कन आदि निरन्तर कार्यरत हैं। और प्राण और सूक्ष्म आत्मा के मिष से जो यह शरीर है निरन्तर गतिशील है और इस प्राण तत्त्व के निकलने से यह शरीर मिट्टी है। सो जो भी कुछ है वह जीते जी का ही है तो क्यों न जो भी जीवन बचा है उसे ही संभाले AND DO IT BY TODAY अभी नहीं तो कभी नहीं। सो प्रभु को बिसार किसकी आराधना करूँ मैं–मोती मुझे मिले हैं जब इस मानस के मानव धर्म में, कंकर बटोरने की क्यों कामना करूं मैं। लग जाए जब लगन, तो जीवन कृतार्थ हो गया। सुख–चैन तो मेरे भीतर ही था, हाय रे मैं कहाँ खो गया।

(3) "नमन् और त्याग भाव":– ओं नमः शम्भवाय च–यहाँ शम् शब्द का अर्थ है आनन्द–शान्ति। वेद माता पुकार–पुकार कर कह रही है कि हे मनुष्यो! तुम अपने व्यवहारों में–व्यवहारों से सदा झुक कर ही चलने का निरन्तर प्रयास करो। अधिकतर 90प्रतिशत परिस्थितियाँ हम स्वयं उत्पन्न कर स्वयं ही जिम्मेदार हैं उनके। 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा'–भोगो पर त्याग भाव से। हमने इस मिट्टी में जन्म लिया तो भोग तो हमें भोगने ही पड़ेंगे–और ईश्वर भी प्रजा की बढ़ोतरी ही चाहता है। सो धरती से सभी सुखों को भोगना है तो जीवन में 'त्याग' करना सीखें। मैं'–मैं मेरी–यह मेरा है जो भी कुछ है वो मैं ही हूँ–तो क्या इस मैं के आगे 'शान्ति' टिक सकती है? सो निकाल दो इस मैं को मन से। गीता भी कहती है–ठहरो–सोचो क्या कभी इस मन का पेट भरा है? क्योंकि हम सीधा रास्ता अपनाते ही नहीं। विश्वपति के ध्यान में जिसने लगाई हो लगन। क्यों न हो उसको शान्ति–क्यों न हो उसका मन मग्न।।

(4) 'कर्म प्रधान':– निष्काम कर्म की भावना से कर्त्तव्यों का निर्वाह करते हुए जीना। गीता का सार ही निष्काम कर्म है। इसमें भगवान श्री कृष्ण जी अर्जुन को कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं। निष्काम कर्म से तात्पर्य है आसक्ति रहित कर्मों का सम्पादन। सीधी सी बात जितना हम आसक्ति में फंसेंगे उतना ही हम उसमें लिप्त अर्थात् धँसते जाएंगे। हम सभी जानते ही हैं कि जब सभी पदार्थ हमें उस ईश्वर से ही प्राप्त होते हैं और मात्र उन कर्मों का सम्पादन हमें अर्थात् एक चेतन शक्ति को ही करना होता है। सो प्रत्येक कर्म के सम्पादन में यदि जगत् के अधिकार की रक्षा होगी तो शान्ति निश्चित मिलेगी।

REMEBER THE LAW OF NATURE:- 'FORGIVE AND FORGET, AND IT SHOULD BE ACCEPTED BY YOU, YOUR BEHAVIOUR ALL AROUND YOU, कर ले प्रभु से प्यार, ओ चेतन प्राणी,

बीती जाए यूँ ही जिन्दगानी।
वो ज्ञान का भन्डार–वो पालन हारा,
फिर क्यों तू भटके मारा मारा।।
कर ले... तुझे शान्ति मिलेगी।।

(5) 'प्रेम':– प्रेम का सीधा अर्थ है प्यार अर्थात् वाणी से मधुरता। प्राणी जगत में ईश्वर ने मनुष्य योनि में ही 'बुद्धि और विचार' शाक्ति प्रदान की है–फिर भी कुछ गरीब और कुछ बहुत धनवान हैं। यह सब उस ईश्वर का दोष नहीं, यह सब हमारे कर्मों का ही फल है–क्योंकि हमने बुद्धि द्वारा विचार शक्ति का उचित प्रयोग ही नहीं किया। यह माना ही नहीं जा सकता कि हमारे पास कुछ भी नहीं है। भले ही हम 'धन' से वंचित हों पर प्रेम–आत्मीयता, स्नेह, अपनापन, मधुर वाणी, ज्ञान–विद्या, भक्ति, संगीत, ध्यान शक्ति आदि जो भी कुछ है उसे ही आगे बाँटो। यही सबसे बड़ा 'दान' है।

Love everyone unconditionally, it is a powerful energy and creates happiness and is necessary for life to 'LIVE ON' as blood is to body.

अब भी समय है कर ले विश्वास तू उस पर,
न भटक तू झूठे–प्रपंचों में।
कर ले प्यार उस प्रभु से–ओ चेतन प्राणी
तुझे शान्ति मिलेगी।

(6) 'श्रेय व प्रेय मार्ग':– जीवन का प्रत्येक कार्य दो भागों में विभक्त है। विवेकशील ज्ञानी और धैर्यवान व्यक्ति ही इन दोनों का विश्लेषण कर किसी एक मार्ग को चुनता है। 'ओं अग्निम् दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम्। सा. 3 श्रेय मार्ग अर्थात् प्रभु का वरन् और प्रेय मार्ग–प्रकृति का वरन्। यदि हम पकृति की हरियाली में संलिप्त होकर विषयों में धंसते हुए 'भौतिक सुख' का ही आनन्द उठाते हैं–जो मात्र कुछ क्षणों के लिए ही होता है, तो भई शान्ति कहाँ? और श्रेय मार्ग अपनाने से प्रभु का वरन् कर उसकी शरण में जाते हैं अर्थात् उसके गुण–कर्म–स्वभावानुसार चलने का प्रयत्न करते हैं, तो प्रकृति का वरन् तो स्वतः ही हो जाता है। So you have to maintain balance between Materialism and Spiritualism, and Surrender yourself to that ALMIGHTY.

श्रद्धा भावों से कर आँखें अपनी बन्द,
टिका ले मन को अपने श्वासों पर।
कर ले । प्रभु से प्यार–ओ चेतन प्राणी–
तुझे शान्ति मिलेगी।।

(7) (i) 'भय और अहंकार'– मृत्यु रूपी महाविपत्ति या भय को जीवन से निकाल दो। कोई 'विपत्ति' यदि जीवन में आ भी जाए–उससे कभी भी भयभीत मत होवो। जो होना है उसे होने दो–जो भी होगा अच्छा ही होगा। मन में दृढ़ता और सहनशीलता बनाए रखो, विश्वास करो उस प्रभु पर, कोई न कोई रास्ता अवश्य निकलेगा। क्योंकि सभी पदार्थों को देने वाला वह ईश्वर ही है। मृत्यु से भी मत डरो।

ओं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्–

ऋ.7.59.12

हे त्र्यम्बक! उत्पत्ति, पालन और प्रलय करने हारे परमेश्वर! हम तुझे नमन् करते हैं क्योंकि तू ही हमें 'शान्ति' प्रदान कर हमारा सदा कल्याण करता है तो हमें डर वा भय किस का? और हो जाओ उस ईश्वर की भक्ति में लीन–तल्लीन–मग्न, प्रेम और श्रद्धा भावों से, तुरन्त 'शान्ति' निश्चित है।

श्रद्धाभावों से देख अपनी तीसरी आँख से,
वह तेरे ही हृदयाकाश में विराजमान है।
त्याग–'भय' को मन से–कर ले प्रभु से प्यार
तुझे शान्ति मिलेगी।।

(ii) 'सकारात्मक सोच' – मनुष्य जीवन की सफलता और उन्नति उसकी

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–ध्यान करते समय किस चीज या आकृति का मन में ध्यान किया जाये? उस चीज को या नाम को या भगवान का कहाँ पर ध्यान लगाया जाय–उसका स्थान और उसका स्वरूप बताने की कृपा करें तथा किस आसन में तथा किस समय ध्यान किया जाये?

समाधान–देखिये, आसन तो यह है जिसमें हम चौकड़ी मार के बैठे हैं। यह है 'सरल आसन' सबसे आसान। इस आसन में भी आप ध्यान कर सकते हैं। फिर एक है 'स्वस्तिक आसन। दाँये पाँव को उठाकर के बाँये पाँव की पिंडली पर उल्टा रख लें और बाँये पाँव का इस दाँये पाँव की पिंडली के नीचे रख दें, उल्टा करके। और कमर सीधी, गर्दन सीधी, भुजायें सीधी। यह हो गया स्वस्तिक आसन। इसमें भी बैठ सकते हैं। यह भी सरल है। फिर थोड़ा कठिन 'पद्मासन' है। दायाँ पाँव ऊपर उठाओ, बांयी जंघा पर रखो। फिर बाँया पाँव उठकार दांयी जंघा पर रखो। अब यह थोड़ा कठिन है। इसको 'पद्मासन' कहते हैं। किसी–किसी को इसमें बैठने का अभ्यास हो तो इसमें भी ध्यान कर ले और नहीं हो तो कोई बात नहीं।

ध्यान का समय आपकी इच्छा पर है। सुबह चार बजे बैठें, पाँच बजे बैठें, छह बजे बैठें, सात बजे बैठें। दिन निकलने से पहले कर लें, तो अच्छा है। उस समय शोर–शराबा नहीं होता। शांति होती है तो मन अच्छा लगेगा। आसानी से ध्यान होगा। शाम को भी सूर्यास्त के आसपास का समय ध्यान करने के लिए अच्छा है। इसके अलावा यदि मजबूरी है, जैसे कि कोई आठ बजे ऑफिस से घर आता है तो आठ बजे कर लो। कोई सात बजे आता है तो सात बजे कर लो। नौ बजे आता है तो नौ बजे कर लो और उसको टाइम ही नहीं मिलता है, तो रात को खाना खाके साने से पहले कर लो। कुछ तो करो, कभी भी ध्यान करो। ध्यान जरूरी है। अगर प्रॉपर टाइम पर बैठ सकते हैं तो बहुत अच्छा है। सही समय सुबह सूर्योदय से पहले और शाम को सूर्यास्त के आसपास है। यदि सही अनुकूल समय नहीं मिलता तो आगे–पीछे करें।

जहाँ आपको मन एकाग्र करने में सुविधा हो, वहाँ पर ध्यान करें। अधिकांश लोगों को मस्तक के बीच में, मन एकाग्र करने में सुविधा रहती है, आसानी होती है। वे आँख बंद करके अपनी अंतर्दृष्टि से मस्तक के बीच के स्थान को देखें। और रूप, रंग, आकृति, लाइट, कुछ नहीं देखनी, सब हटा दीजिये। बिल्कुल अंधेरा बनाइये, जैसे रात को अंधेरा होता है, ऐसा खूब गहरा अंधेरा अपने मन में देखिये। फिर अंधेरे के बाद एक लंबा चौड़ा विस्तृत आकाश देखिये। खाली–खाली स्थान और अंधेरा ये दो चीजें देखिये। यह हो गई ध्यान की तैयारी। अब ईश्वर का ध्यान शुरू करेंगे। पर ध्यान का 'प्रैक्टिकल' करने से पहले होती है 'थ्योरी'। पहले थ्योरेटिकल समझ लो, कि ईश्वर कैसा है? लोगों को यहीं झगड़ा है बहुत। अच्छा यह बताइये, ईश्वर एक है या अनेक? एक है, बस है याद रखना। अब ये प्रैक्टिकल के लिए पहले हम थ्योरी तैयार कर रहे हैं। पहले थ्योरी ठीक करेंगे, फिर प्रैक्टिकल करेंगे। तो ईश्वर एक है। दूसरी बात–एक ईश्वर एक जगह पर रहता है, या सब जगह रहता है? सब जगह रहता है। जो वस्तु सब जगह रहती है, क्या उसकी शक्ल, फोटो, आकृति होनी चाहिये या नहीं होनी चाहिये? नहीं होनी चाहिये। अब देखो, बात साफ हो रही है न। हमारी यह थ्योरी तैयार हो रही है। ईश्वर एक है, वो सब जगह रहता है, उसकी कोई शक्ल नहीं है, वो निराकार है। तीन बातें साफ हो गईं। मेरे साथ दोहराइये, पहली बात क्या थी? ईश्वर एक है। दूसरी बात–ईश्वर सब जगह रहता है और तीसरी बात–ईश्वर निराकार है। अब चौथी बात –ईश्वर चेतन है या जड़? चेतन है। तो यह चौथी बात दिमाग में रखनी है कि ईश्वर चेतन है। गॉड इज ओमनीशियन्ट, ईश्वर सर्वज्ञ है, वो सब कुछ जानता है। वो ईंट–पत्थर की तरह, दीवार की तरह जड़ नहीं है। हमारी आपकी तरह चेतन है, सोचता है , समझता है, सबको देखता है, सुनता है, सबके कर्मों का हिसाब रखता है। तो चौथी बात ईश्वर चेतन है। और पाँचवी बात–ईश्वर में आनंद है या नहीं है? है। बस पाँच बातें तैयार रखो, ये थ्योरी हो गई। ईश्वर एक है, सर्वव्यापक है, निराकार है, चेतन है, आनंदस्वरूप है। यह थ्योरी तैयार करके और फिर ध्यान करेंगे। हमने ध्यान के लिए मन को एकाग्र किया और ऐसा सोचा कि चारों तरफ खूब गहरा अंधेरा है, और शून्य आकाश है। कुछ नहीं। इतनी तैयारी करने के बाद अब वो पाँच बातें यहाँ दोहरायेंगे। इस पूरे आकाश में एक ईश्वर है और वो पूरे आकाश में सर्वव्यापक है, फैला हुआ है। वो निराकार है, उसकी कोई आकृति नहीं है, कोई शेप नहीं, कोई कलर नहीं, कोई फोटो नहीं, कुछ नहीं, वो चेतन है। और आनंद का भंडार है। जैसे समुद्र में पानी ही पानी होता है, ऐसे ही ईश्वर में आनंद ही आनंद है। इस तरह से बैठकर पाँच बातें दोहरायें और फिर ईश्वर का ही चिंतन करें। दूसरी बात बीच में नहीं घुसनी चाहिए। खाने–पीने की बात, शॉपिंग की बात, टेलीफोन की बात, बच्चे के स्कूल की फीस की बात, लड़ाई–झगड़े की बात, मुकदमे की बात बीच में कोई नहीं आनी चाहिये। बस यही पाँच बातें दोहराइये और फिर इसके बाद ओ३म् का जप कर सकते हैं। ओ३म् का जप अर्थ सहित करें। केवल ओ३म् शब्द बोलें, फिर उसका अर्थ बोलें। दूसरा विकल्प है–ओ३म् के साथ ईश्वर का एक गुण जोड़ दें। जैसे– 'ओ३म् आनंदः। यह एक मंत्र हो गया। इस तरह से मंत्र बोलें, फिर उसका अर्थ बोलें। तीसरा विकल्प–फिर गायत्री मंत्र का पाठ करें, वो भी अर्थ सहित करें। चौंथा विकल्प–वैदिक संध्या के मंत्रों से ईश्वर का ध्यान करें। मंत्र भी बोलें। मन में, एक–एक शब्द का अर्थ भी दोहरायें, और फिर उसका भावार्थ भी दोहरायें। इस तरह से ईश्वर का ध्यान करना चाहिए। कोई लाइट, कोई आकृति, कोई फोटो, कोई गुरु जी का चित्र कुछ नहीं रखना। कई लोग गुरुजी का ही ध्यान करते हैं। कोई उनका फोटो लगा लेता है, उसको देखता रहता है। फिर आँख बंद करके उसी का ध्यान करता रहता है। ये आपको मुक्ति नहीं दिलाने वाले। ये जो शरीरधारी गुरु हैं, इनमें से कोई आपको मुक्ति दिलाने वाला नहीं है। ये सब मनुष्य लोग हैं। इनमें से कोई परमात्मा नहीं, किसी के पास शक्ति नहीं, किसी के अधिकार में मोक्ष नहीं। मोक्ष केवल सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान परमात्मा के हाथ में है। अगर आपको मोक्ष चाहिये, आनंद चाहिये तो जैसे अभी हमने थ्योरी पर विचार किया, ऐसे ही ईश्वर का ध्यान करना है और किसी का नहीं।

शंका–क्या कुसंस्कार से आत्मा दबता है?

समाधान–जी हाँ, कुसंस्कार से आत्मा दबता है, आत्मा की अवनति होती है। इसलिये कुसंस्कारों का विरोध करना चाहिये।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

पृष्ठ 03 का शेष

जन–जन के नायक...

नेता जी को स्वर्ण से तोला जाना था। नेता जी को तिरंगे फूलों से सजी तुला के एक पलड़े पर बैठाया गया। दूसरे में देश प्रेम की दीवानी माताओं– बहनों ने अपने स्वर्ण आभूषण उतार–उतार कर चढ़ाए। आभूषण ले लेकर स्त्रियाँ गीत गाती हुए आ रही थीं और तुला में आभूषणों को ऐसे चढ़ा रही थीं जैसे कि किसी देवता के चरणों में चढ़ा रही हों। नेता जी सुभाष चन्द्र बोस जनता के लिए, भारतीयों के लिए, स्त्री–पुरुष–बालक–युवाओं के लिए देवता ही थे, आजादी के देवता थे।

स्वर्ण आभूषणों से जब तुला के दोनों पलड़े लगभग बराबर हो गए परन्तु लेश मात्र कमी रह गई तभी एक महिला नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के सामने आकर खड़ी हो गई। उसके पास उसके इकलौते पुत्र की तस्वीर थी जो उसने अपने सीने से लगाई हुई थी। उसने तस्वीर को नीचे रखा और बोली। सुभाष यह मेरे इकलौते पुत्र की तस्वीर है। मेरे पुत्र को अंगेजों ने फांसी दे दी। यदि दूसरा पुत्र भी होता तो देश के लिए समर्पित कर देती। इतना कह तस्वीर को उसने तोड़ दिया। तस्वीर अलग निकाल ली। फ्रेम रह गया फ्रेम उसने तुला में चढ़ा दिया। जहाँ ऐसी राष्ट्र भक्त वीरांगनाएँ हों वह देश अवश्य स्वतन्त्र होकर रहेगा। नेता जी सुभाष चन्द्र बोस वाला पलड़ा और स्वर्ण वाला पलड़ा अब एकदम बराबर हो गए थे। नेता जी ने उत्साह से कांपते हुए तभी मुट्ठी बांध हवा में हाथ उठाकर कहा कि कौन कहता है भारत आजाद नहीं होगा? सुभाष चन्द्र बोस ने उस माता के पैर छूकर उपस्थित भीड़ को सम्बोधित कर कहा "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा"। क्रान्तिकारियों के बलिदानों से हमें आजादी मिली। आज जिस हवा में, देश में हम श्वास ले रहे हैं, आजादी का आनन्द उठा रहे हैं वह क्रान्तिकारियों के खून बहाने से ही मिली है। क्राान्तिकारियों ने राष्ट्र के लिए अपना बलिदान कर दिया, अमर हो गए। हमें उनकी सदैव याद रखना चाहिए तथा देश की राष्ट्रीय एकता अखण्डता को बनाए रखना होगा तथा जैसे नेता जी ने अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिए थे, उनको यहाँ से हिन्दुस्थान छोड़ कर भागने को विवश कर दिया था उसी प्रकार हमें देश की विघटनकारी गतिविधियाँ को नष्ट करना होगा। भ्रष्टाचार, अराजकता, अनैतिकता, अपराध को बढ़ावा देने वालों को निष्क्रिय करना होगा। भारत की प्राचीन सत्य सनातन वैदिक संस्कृति को पुनः स्थापित करना होगा।

गली नं. 2, चन्द्रलोक कालोनी
खुर्जा–203131

यावद् जीवेम शरदः शतम् जीवेम

● कृष्ण मोहन गोयल

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

यह एक वेद मन्त्र है। इस जगत में प्रत्येक प्राणी किसी न किसी दुःख से पीड़ित है। प्राणी की इस पीड़ा को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय मनीषियों ने बिना किसी धर्म, जाति एवं आस्था का भेदभाव रखकर ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहा है कि हे प्रभु! इस संसार में सभी प्राणी सुखपूर्वक रहें, सभी प्राणी रोग रहित होकर अपना जीवन व्यतीत करें, सभी प्राणियों का जीवन कल्यामय होवे तथा किसी भी प्राणी के जीवन में किसी भी प्रकार का दुःख न आये और प्रत्येक प्राणी बिना किसी दुःख, रोग से पीड़ित रहते हुए, सुख–समृद्धि को प्राप्त करता हुआ शतायु होकर अपना जीवन व्यतीत करे।

जिस प्रकार से प्रकृति कोई भी कार्य अपने उपभोग के लिए नहीं करती है और वह सदैव परोपकार के लिए ही संलिप्त रहती है। इसी प्रकार से हमारे ऋषि–मुनि भी सदैव परोपकार की भावना से युक्त रहे हैं। प्रकृति का अनुसरण करते हुए संसार में उत्पन्न होने वाले प्रत्येक मनुष्य का भी धर्म और मार्ग होना चाहिए तथा संसार में परोपकार की भावना से श्रेष्ठ कार्य करते हुए सौ वर्ष तक जीवित रहे। यही प्रत्येक मनुष्य के जीवन का एकमात्र उद्देश्य होना चाहिए जिससे शतायु की सार्थकता भी सिद्ध हो सकेगी।

भारतीय हिन्दू संस्कृति में अपने गुरुजनों से आशीर्वाद लेने की परम्परा सदैव से रही है। इसके लिए प्रातःकाल नित्यप्रति उठकर सर्वप्रथम अपनी दोनों हथेलियां फैला कर 'कराग्रे वस्ती लक्ष्मी, कर मध्ये सरस्वती, करमूलं तु गोविन्दं, कर प्रभाते दर्शनम' मन्त्र पढ़ते हुए परमात्मा का स्मरण करना और तत्पश्चात अपने परिवार के समस्त गुरुजनों का चरणस्पर्श कर आशीर्वाद लेने के लिए कहा गया है। कि अपने गुरुजनों को अभिवादन करने से अभिवादनशील मनुष्य को गुरुजनों के आशीर्वाद फलस्वरूप आयु, विद्या, यश और बल स्वयं ही प्राप्त हो जाते हैं। यहां पर बल शब्द से तात्पर्य आत्मबल और धनबल दोनों से ही है।

जैसा कि हमारे प्राचीन ग्रन्थों में कहा गया है ऋषि–मुनियों की आयु एक–एक हजार वर्ष से भी अधिक हुआ करती थी। महाभारत में भी कहा गया है कि महाराज भीष्म पितामह को उनके पिता महाराज शान्तनु ने इच्छा मृत्यु का वरदान दिया था। भारतीय मनीषियों ने मानव जीवन को अनुमानतः सौ वर्ष निर्धारित किया है और इसी के अनुसार उन्होंने मानव जीवन को चार भागों में विभाजित करते हुए प्रत्येक भाग के लिए 25 वर्ष निर्धारित किया है जिसको चतुर्थ आश्रम भी कहा जाता है–अर्थात् ब्रह्मचर्य आश्रम–25 वर्ष, गृहस्थ आश्रम–25 वर्ष, वानप्रस्थ आश्रम–25 वर्ष तथा संन्यास आश्रम–25 वर्ष। इस प्रकार जीवन को सौ वर्षों में विभाजित किया है। जन्म लेने के पश्चात शिक्षा आदि ग्रहण करते हुए 25 वर्ष तक ब्रह्मचारी रहते हुए जीवन व्यतीत करना, फिर गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करते हुए पच्चीस वर्ष व्यतीत करना, तत्पश्चात् पच्चीस वर्ष के लिए संसार से माया मोह का त्याग करते हुए वन के लिए प्रस्थान कर जाना। अंतिम आश्रम संन्यास है जिसमें केवल ईश्वर के प्रति समर्पित होकर मृत्यु को प्राप्त होकर मोक्ष को पा लेना ही लक्ष्य रहता है।

वर्तमान समय में भी हमारे देश में ऐसे अनेक महापुरुष हैं जो शतायु पूर्ण करने जा रहे हैं और उन्होंने अपना जीवन स्वयं के लिए न जीकर परोपकार का श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जैसे–भारत के पूर्व प्रधान मन्त्री अटल बिहारी बाजपेई, डॉ. मनमोहन सिंह जो रिजर्व बैंक आफ इंडिया के गर्वनर भी रह चुके हैं तथा भारत के प्रधानमन्त्री पद पर भी रहे, द्रविड़मुनेत्रकड़गम के संस्थापक एम. करुणानिधि, पूर्व निर्वाचन आयुक्त टी. एन. शेषन, चिपको आन्दोलन के प्रेरक सुन्दर लाल बहुगुणा, चांडी प्रसाद भट्ट, भारत के प्रसिद्ध उद्योगपतियों में रतन टाटा तथा राहुल बजाज, एम.डी.एच. के संस्थापक महाशय धर्मपाल के नामों की गणना की जा सकती है,

भारत के सुप्रसिद्ध वरिष्ठ चिकित्सकों में डॉ. जे.एन. रस्तौगी का नाम लिया जा सकता है। फिल्मी नगरी में स्वर साम्राज्ञी लता मंगेशकर तथा सुप्रसिद्ध अभिनेता दलीप कुमार, ग्रेट ब्रिटेन की महारानी एलिजाबेथ, भारतमाता मन्दिर, हरिद्वार के संस्थापक सत्यमित्रानन्द गिरि, उच्चतम न्यायालय की पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्रीमती फातिमा बी, पूर्व पुलिस आयुक्त वी.पी. सिंहल, रिजर्व बैंक आफ इंडिया के पूर्व गर्वनर विमल जालान भी इसी श्रेणी के महापुरुष हैं, जो अपने परोपकारी श्रेष्ठ कार्यों के लिए चिरस्मरणीय रहेंगे।

113–बाजार कोट
अमरोहा–244221

☞ पृष्ठ 04का शेष

शांति के आठ सूत्र

सकारात्मक और आशावादी सोच पर ही निर्भर करती है। सारी सृष्टि की चरितार्थता भी आशावाद में ही प्रतिष्ठित है। (क) आशावाद वह शक्ति है जो जीवन को विश्वास और ऊर्जा के साथ संघर्ष करते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। हेनरी फोर्ड, एडिसन, दयानन्द आदि महापुरुष असफलताओं के बावजूद भी संघर्ष करते रहे और अन्त में सफल हुए। (ख) आशा से साहस, सामर्थ्य, आत्मविश्वास और कार्यक्षमता बनी रहती है। (ग) सकारात्मक सोच से 'संदेह' स्वतः दूर हो जाता है और विचार शक्ति बढ़ती है। (घ) निरन्तर शुभ संकल्पों से 'मन' को दृढ़ रखते हुए 'सोच' मनुष्य के स्वभाव में परिवर्तित हो जाती है और भीतर अन्तःकरण की सभी छिपी शक्तियों की अनुभूति उजागर होती है।

यह कर्म–ज्ञान–भक्ति ही है भव तारिणी।

सुख–दुःख द्वन्द्व को मिटाती, है शान्ति दायिनी।।

(8) 'प्रार्थना':– प्रार्थना सदा युक्तिसंगत हो। और केवल सद्बुद्धि और निरोग रहने की प्रार्थना ही करनी योग्य है। वह हमारी हर प्रार्थना को सुनता है बशर्ते उस प्रार्थना में पुरुषार्थ हो, बिना पुरुषार्थ के प्रार्थना अर्थहीन है। प्रभु से प्रार्थना के लिए पहले कम से कम 5–15 मिनट तक मौन धारण करें और उस प्रभु के गुण–कर्म–स्वभाव का चिन्तन कर उसका धन्यवाद करें कि हे प्रभो! जो सुख–शान्ति, सन्तोष एवं पवित्रता का जो भी न्यून व अधिक का अनुभव हुआ है–यह सब आपकी ही कृपा का परिणाम है। अतः यह सब आपको समर्पित है।

"ओं! ओं! ओ३म् परब्रह्म परमात्मने नमः।"

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, सत्–चित्त–आनन्द, सर्वेश्वर, सर्वरक्षक, सब जीवों के प्राण दाता,सबके दुःखों के हर्त्ता, विघ्न विनाशक प्रभो! आप हमारे सारे दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुर्दिनों को दूर कर केवल कल्याण कारक पदार्थ ही हमें प्राप्त करायें। हे नाथ! तू हमें सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र और वनस्पतियों के माध्यम से, निरन्तर सब कुछ देता आ रहा है।

अतः हे परमात्मन्! मैं तो केवल तेरे ही आश्रित हूँ। मुझे बल, बुद्धि, शरीर में निरोगता, यश, दिव्य आध्यात्मिक धन और अगाध शान्ति प्रदान कीजिए।

हे देवाधिदेव! मैं दिव्य दृष्टि रखते हुए, तेरे दिव्य गुण–कर्म–स्वभाव अनुरूप चलता हुआ सौ वर्ष पर्यन्त अदीन होकर सुकर्मों से निहित ऋषि–मुनियों के समान इन दिव्य धनों का उपयोग करता हुआ, सदा आगे बढ़ूँ। "ओं चरैवेति, चरैवेति।"

"ओ आवरण को दूर करने वाले जगदीश, मुझे दोनों हाथों से भर दो।"

एक हाथ को संसार के विषय–वासनाओं के वैराग्य से।

और दूसरे हाथ को अपने चरणों की प्रीति के 'अनुराग' से।।

ओं शान्ति! शान्ति! शान्ति!

लगा ले मन को तू ओंकार जप में–प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में।
जब लगेगा 'ध्यान' उस जगदीश्वर में
कर ले प्रभु से प्यार ओ चेतन प्राणी–
तुझे शान्ति मिलेगी।।

उपसंहार:–"वैराग्याभ्यामतन्निरोधः"–गीता। योग दर्शन सुकर्म, शुद्ध आहार–विचार एवं सद्भाव आदि सभी को एक स्थान पर स्थिर कर सदा सत्य का आचरण और अनाचार का त्याग कर चलें। मत भूलें कि ज्ञान के साथ 'आत्म–ज्ञान' भी बहुत आवश्यक है। यह ही हमारे अन्तःकरण की शक्ति है और शान्ति की वास्तविक कुञ्जी है और शान्ति का आधार है। अतः हमें हर हाल में अपने व्यवहारों को शिष्टाचारी, विनयी, नीतिवान् और परिणामदर्शी बनाना ही होगा।

" जीसस की उक्ति":– SEEK YOU FIRST THE KINGDOM OF GOD. THEN ALL ELSE BE ADDED TO YOU. (तुम पहले प्रभु की सत्ता/राज्य को खोज लो, शेष तुम्हें अपने आप मिल जाएंगे) परन्तु हम शेष को खोजते हैं, प्रभु की सत्ता को नहीं।

जो बांटता है,
उसे आनन्द निश्चित मिलेगा।
जो बटोरता है,
वह उसे निश्चित खो देगा।
सो आओ जीवन सफल बनाएँ,
सदा सत्य को ही जानें।
भटक लिए बाहर बहुत,
प्रभु को भीतर ही जानें।।

और गुनगुनाएँ:–

हे जग पिता हे जग प्रभु
मुझे अपनी भक्ति का दान दो।
तुझे अपने मन में मैं देख लूँ,
यही ज्ञान दो, यही ध्यान दो।।
हे जग पिता...
मेरे मन में तेरा ही रंग हो,
मेरा ज्ञान तेरी ही तरंग हो।
मेरी काम–क्रोध से जंग हो,
मुझे लोभ–मोह से तार दो।।
हे जग पिता...

मन्त्री
आर्य समाज अशोक विहार
9718965775

ईश्वर, जीव और प्रकृति–यही तीनों सृष्टि के मूलतत्व हैं

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

यह वेदानुसार ऋषि दयानन्द की खोज है, जो बिल्कुल सत्य है। भावेश मेरजा के शब्दों में "ईश्वर समस्त जड़ पदार्थों तथा चेतन जीवात्माओं में अखण्ड एकरस व्यापक है अतः वह मूर्त्त पदार्थों में भी व्यापक है।

संसार में दो चेतन पदार्थ हैं–ईश्वर और जीवात्मा और एक जड़ पदार्थ है मूल प्रकृति अथवा उससे बना हुआ सम्पूर्ण प्राकृतिक जगत।

प्रश्न यह था कि–ईश्वर तो जड़ पदार्थ में भी व्यापक है तो इससे वह पदार्थ चेतन क्यों नहीं हो जाता? यह एक विचारणीय विषय प्रस्तुत किया गया है।

पहली बात तो यह है कि 'परमात्मा' कैसा है को कोई देख नहीं सका। परन्तु ज्ञानी लोग उसके होने का ज्ञान इस आधार पर करते हैं, जैसे पढ़ते हुए विद्यार्थी को देखकर विद्या का ज्ञान होता है। जैसे पुत्र को देखकर उसके जन्म दाता पिता का ज्ञान होता है। जैसे किसी सुन्दर आभूषण को देखकर उसको बनाने वाले शिल्पी का ज्ञान होता है। जैसे किसी कारखाना में मानव उपयोग के लिये बन रही मशीनों को देखकर उसे बनाने वाले वैज्ञानिक का ज्ञान होता है। उसी प्रकार मानव शरीर की विज्ञान संगत रचनाओं,तथा जीवन उपयोगी भिन्न–भिन्न पंचतत्वों एवं सूर्य चन्द्रादि की विधिपूर्वक सृष्टियों को देखकर सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर का ज्ञान स्वाभाविक रूप में हो जाता है। वह हमें भले ही न दिखता हो पर उसका होना सत्य है, क्योंकि जो अतिसूक्ष्म, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान और जिसमें सर्वज्ञता का गुण है, वही एकमात्र सोच समझ कर सर्वश्रेष्ठ मानव तथा अन्य सब प्राणी उत्पन्न हो सकने के लिये पहले उपयोगी पंच सूक्ष्म भूतों से, पंचतत्वों एवं सूर्य चन्द्रादि को विभिन्न प्रकार के परमाणुओं के समूहों से निर्माण कर दिया, उसके पश्चात् सागर, नद–नदियाँ, पहाड़–पर्वत और वनस्पतियों की उत्पत्ति की। वनस्पतियों की उत्पत्ति पहले क्यों की, क्योंकि वह जानता था कि प्राणियों की उत्पत्ति के पहले इन सबकी आवश्यकता पड़ेगी। उदाहरण के लिये जैसे शिशु जन्म के पहले ईश्वरीय नियम से माता के स्तन में दूध की व्यवस्था पहले ही हो जाती है वैसे ही प्राणियों के उत्पन्न होने के पहले, शुद्ध अक्सीजन एवं फलादि के लिये वृक्ष–वनस्पत्तियाँ पहले उत्पन्न हुईं।

यदि जड़ प्रकृति के कणों में ईश्वर चैतन्यता और सर्वज्ञता का गुण दे देता, तो प्रकाश कणों के चुम्बकीय तरंग, शब्दादि को वहन करने का गुलाम न बनाता। आप जड़ पदार्थों से बातें भी कर सकते थे। यह सभव नहीं है क्योंकि यह सृष्टिक्रम के विरुद्ध है।

प्रश्न था कि यदि ईश्वर व्यापक है तो जड़ पदार्थ अथवा मूर्त्ति चेतन क्यों नहीं? उत्तर–हमारे विचार से 1– अग्नि में जलाने का गुण है और वह सब जगत व्याप्तमान है पर सभी उसके गुणों से जलने नहीं लगते। 2– सूर्य का प्रकाश सभी प्रदार्थों पर पड़ रहा है, पर वे सब पदार्थ सूर्य जैसे प्रकाशवान नहीं बन सकते। 3–अग्नि का गुण, पृथिवी, जल, वायु, अन्तरिक्ष सभी में व्याप्त है, पर वे चारों अग्नि तत्व नहीं बन सकते। 4– इस शरीर में आत्मा के द्वारा प्राण क्रियाशील है, पर प्राण आत्मा के ज्ञातृत्व गुणों को नहीं अपना सकता, क्योंकि प्राण चेतन से स्थूल है। इसी प्रकार ईश्वर, कारण रूप प्रकृति से सूक्ष्म और आत्मा से भी सूक्ष्म है। इसलिये वह सर्व शक्ति सम्पन्न है। बनाने वाला, बनने वाले पदार्थ से पृथक होता है अतः बनने वाला उपादान बनाने वाले के ज्ञानादि चैतन्यता गुणों को वह प्राप्त नहीं कर सकता जैसे बनाने वाला चैतन्य है तो उसके द्वारा जो पदार्थ बनते हैं, वे उस जैसा चैतन्य नहीं हो सकते। वैज्ञानिक जन जितने इलेक्ट्रोनिक यन्त्र दूरदर्शन, कम्प्यूटर आदि बनाये हैं वे सब जड़ कणों से बुद्धि पूर्वक बनाये गये हैं। परन्तु वे यन्त्र या उनके कण कभी भी स्वयं वैज्ञानिक नहीं बन सकते।

जड़ पदार्थ अपने आप न हिल सकता है न स्वय कुछ बुद्धिपूर्वक बन जाने के उसमें गुण हैं अतः उन कणों में जो गुण और गति है सब ईश्वर की देन है जिसे व्यापक, प्रेरक और प्रकाशक कहा जाता है। वेद मंत्र कहता है कि –**"यमेरिरे भृगवो विश्ववेदसं नाभा पृथिव्या भुवनस्य मज्मना। अग्नि तं गीर्भिर्हिनुहि स्व आ दमेय एको दस्वो वरुणो न राजति।।** (ऋ 1,143,4) हे मनुष्यो! जो विद्वानों के द्वारा जानने योग्य, सर्वव्यापक, प्रशंसा योग्य, सच्चिदानन्द आदि लक्षणों वाला सर्वशक्तिमान् अनुपम, अतिसूक्ष्म, स्वयं प्रकाश,स्वरूप और अन्तर्यामी परमेश्वर है, उसे योगांगों के अनुष्ठान की सिद्धि के द्वारा तुम अपने अन्दर जानो।

वैज्ञानिक ऋषि पतंजलि ने अष्टांग योग द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार कर लिया था, तभी तो अपने योगशास्त्र में कहा है:– **"क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष विशेष ईश्वरः।।** 24 योग दर्शन।। क्लेश, कर्मफल और वासनाओं से (अपरामृष्ट) असम्बद्ध पुरुष विशेष 'ईश्वर' है। पांच क्लेश अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश। ईश्वर जो पुरुष जीव–जीव नहीं किन्तु पुरुष विशेष है।

ईश्वर के अर्थ हैं 'ईशनशील अर्थात् इच्छामात्र से सम्पूर्ण जगत् के उद्धार करने में समर्थ,। योग दर्शन में **"तत्र निरतिशयं सर्वज्ञ बीजम्"** (1,25) ईश्वर को इस प्रकार समस्त ज्ञान का स्रोत कहते हुए बतलाया गया है कि वह (ईश्वर) जिसका काल विभाग नहीं कर सकता, पूर्ण (देव्य) ऋषियों का भी गुरु है। **यथा–स पूर्वमेषामपि गुरुः कालेनाऽन वच्छेदात्** (यो. 1,26) इस प्रकार ईश्वर के अस्तित्व को तो सभी दर्शनकारों ने माना है यथा–**'ईश्वरः– कारणं पुरुष कर्माफलम् दर्शनात्।** (न्याय 8,1,19) मनुष्य के कर्मों के फल जिसके हाथ हैं, वही ईश्वर है। गीता के पांचवें अध्याय में दर्शाया है–**ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां...।**

जिनका अन्तःकरण का अज्ञान विवेकज्ञान द्वारा नाश हो जाता है, उनका वह ज्ञान सूर्य के सदृश उस ब्रह्म परमात्मा के स्वरूप को हृदय में प्रकाशित करता है अर्थात् साक्षात् करता है।

"ईदृशेश्वर सिद्धिः सिद्धा"। सांख्य दर्शन। **"सहि सर्ववित् सर्वकर्त्ता।"** (सां.द. 3,56)

इस सूत्रों से ईश्वर की सिद्धि स्पष्ट शब्दों में बताई गई है। 'वह चेतनतत्व ईश्वर, प्रकृति जिसके अधी ज्ञान व्यवस्था और नियम पूर्वक पुरुष के अपवर्ग के लिये प्रवृत हो रही है, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है। (1) जिसने सबको उत्पन्न किया वही ईश्वर है। (2) जिसने सृष्टि की आदि में वेदों का बीजात्मक ज्ञान दिया वही सर्वज्ञ है। (3) जो सबमें प्राण के समान व्यापक और प्रकाशक है वही ब्रह्म है। (4) ईश्वर ने सूर्य की एक महत्वपूर्ण सृष्टि की है। किन्तु सूर्य में किन–किन उपादानों से कितनी संख्याओं में और किन–किन मात्राओं में कैसे क्या हो रहा है, इसका सही ज्ञान किसी को नहीं है। अतः जिसने सूर्यादि को उत्पन्न करके जिसमें अरबों वर्षों से तेजस्कृय उपादानों को अविरत ऊर्जा एवं अग्निशिख ओं को उत्पन्न करने वाली उसके गर्भ में दिव्य अनजाने शक्तियों को प्रदान कर रहा है, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है। और जिन सूर्य–चन्द्रादि के प्रभाव तथा पंचतत्वों से समुद्र एवं विभिन्न प्रकार के वनस्पतियों और जीवों का जन्म हुआ है, उन सबका निमित्त–कारण ईश्वर है।

बहुत से वैज्ञानिक जन आत्मा और परमात्मा को नहीं मानते।पर वह कोई भौतिक पदार्थ तो है नहीं कि जैसे न्यूट्रोनों कणों से टक्कर लगाया और हिंगवोसन=गॉडपार्टिकल अर्थात् सृजनकारक कण (जो प्रकाश की गति से कई गुणा अधिक है) का आविष्कार हो गया। उसी प्रकार सर्वव्यापक, प्रेरक और प्रकाशक ईश्वर को भी 'वैज्ञानिक, उसी जैसा कण के रूप में देखना चाहते हैं, पर यह संभव नहीं है, क्योंकि वह तो उनसे परे और सर्वव्यापक होने से उसकी कोई गति नहीं है। अतः उन्हें किसी मशीन के माध्यम से ईश्वर का दर्शन नहीं हो सकता। क्योंकि दिल्ली जाने वाली ट्रेन से कोई कोलकत्ता नहीं पहुच सकता। ईश्वर को देखने और उसके आनन्द को बोध करने के लिये साधन अलग है।

ऋषि दयानन्द की समाधि कभी–कभी 18 घंटे की हो जाती थी, इसलिये उन्हें भी अष्टांग योग की सिद्धि से सच्चे शिव परमेश्वर का साक्षात्कार हो गया था। उदाहरण के लिये–

एक बार ऋषि दयानन्द से नास्तिक मुन्शीराम ने कहा था कि आपकी तर्कना शक्ति प्रबल है आपने हमें चुप तो करा दिया, परन्तु परमात्मा की कोई हस्ती है ऐसा विश्वास नही दिलाया।

ऋषि ने कहा–"श्रद्धा की वेदी पर विश्वास का दीपक जलाओ, परमेश्वर का साक्षात्कार हो जायेगा।" इस मानसिक दीक्षा ने उन्हें स्वामी श्रद्धानन्द बना दिया।

प्रश्न था कि ईश्वर जब मूर्ति में भी है तो वह चेतन क्यों नहीं हो जाती।

उत्तर–वायु में प्राणादि अनेक गुण हैं, वह दिखता नहीं है, पर सब जगह मौजूद है, उससे कोई अलग नहीं है, वह मूर्त्ति, मानव एवं मुर्दों में भी है, किन्तु जैसे मूर्त्ति जड़ होने से वायु में विद्यमान् प्राण को ग्रहण नहीं कर सकती, उसी प्रकार सर्वोपरि ईश्वर की चैतन्यता और सर्वज्ञता के गुणों को जड़ पदार्थ प्राप्त नहीं कर सकते। केवल चेतन प्राणी ही वायु से प्राण को ग्रहण कर सकते हैं।

प्रश्न–जब मानव को ईश्वर प्राप्त है, तो उसकी प्राप्ति के लिये कामना क्यों की जाती है?

उत्तर–सच्चिदानन्द परमात्मा तो सभी को प्राप्त है, पर सत्चित्त, जीव को उसका आनन्द अप्राप्त है जैसे–मानव को रसगुल्ला तो प्राप्त है पर उसका स्वाद कैसा है नहीं जानता, जब उसे खाता है तभी पता लगता है कि वह कैसा है। इसी प्रकार जब तक मनुष्य ध्यान, धारणा और साधना नहीं करता तब तक ईश्वरानन्द का बोध उसे नहीं हो सकता। तात्पर्य यह कि 'सच्चिदानन्द स्वरूप ईश्वर में' सत्=प्रकृति से बना यह सारा संसार है। 'चित्तजीव है और आनन्द ईश्वर है। जब तक जीव अर्थात् मनुष्य, संसार के तरफ झुका रहेगा तब तक ईश्वरानन्द से वंचित

शेष पृष्ठ 11 पर

महर्षि की महनीय मान्यता

● त.शि.क. कण्णन

महर्षि दयानन्द सरस्वती वागीश एवं विलक्षण पाण्डित्य के अपूर्व संन्यासी थे। राष्ट्रोत्थान के लिये वेदमार्ग के वर्चस्वी पुजारी आचार्य दयानन्द जन जन के मन में अस्मिता, आत्म गौरव और स्वाभिमान का भाव जगाकर वेदशास्त्रों के पठन, पाठन, सांस्कृतिक चेतना, और राष्ट्रीयता के उन्नत परक स्वाभिमान के मार्ग पर चला देना अपना प्रमुख कर्तव्य समझते थे।

वेदों को भारत भुवन में प्रकाशित करने के लिए प्रतिपल एक तड़प, और वैदिक चिन्तन एवं पुनर्जागरण के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने की एक ललक। स्वतंत्रता के गम्भीर चिन्तन ने हृत्पट पर एक लालसा का, क्रान्ति का शंखनाद किया था। वेदों के प्रति एक ऐसी प्रज्वलन उनके प्रीति शास्त्रों की प्रखरता के प्रवक्ता थे। उनकी यह परम मान्यता थी कि इस राष्ट्र ने यदि वेदों की शिक्षा का अनुसरण किया तो निश्चित रूप से भारतीय संस्कृति का, विविध विद्याओं का बृहत्तर एवं विशाल भण्डार का दिग्दर्शन विश्व साहित्य के सभी विद्वानों को ज्ञात हो जायेगा।

वैदिक वाङ्मय पर महर्षि द्वारा किया गया प्रामाणिक अध्ययन, अनुसधान एव लेखन इतना प्रशस्त, परिपूर्ण, सारगर्भित था, जो राष्ट्र के प्रबुद्ध चिन्तक, विचारक, विद्वान् तहेदिल से वेदों की परम पवित्र विद्या को प्रतिष्ठित कर सकें और एक मंगलमय पुनीत भावना से व्रत लें:-

"गिरयश्च मे पर्वताश्च, मे सिकताश्च मे... यज्ञेन कल्पताम्".....

अर्थात् हम ऐसे विशाल यज्ञ का प्रतिपादन करें कि हमारे पर्वत गिरि, जंगल और मरुभूमि पर सर्वत्र वेद मंत्रों की गूंज हो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की स्मृति में, मन में बार बार एक ही बात कौंधती रहती थी मातृभूमि के जन जीवन में वेद विद्या का असाधारण प्रचार राष्ट्र के विभिन्न पक्षों में इतनी तन्मयता से प्रचलित हो, मेरे प्रयत्न का यही विलक्षण भाव है। ऐसे दुर्दम, क्षमाशील, अदभ्य प्रतिभावान, दृढ़ निश्चयी, अद्वितीय साहस की प्रतिमूर्ति, अलौकिक उत्साही स्वामी जी वेदों की शिक्षा के अनुशीलन के लिए यावज्जीवन प्रयत्नशील रहे। राष्ट्र के प्रत्येक क्षेत्र में लाघवता से मण्डित इस देश को जगत् गुरु के उच्चासन पर प्रतिष्ठित करने के लिए शुद्ध सात्विक मन से भक्ति भाव से रात दिन प्रयत्न करते रहे थे।

स्वामी दयानन्द जी सभी स्थानों पर अपने व्याख्यानों से कथनों से मानव मानस को अभिभूत कर देते थे। स्वामी जी में ज्ञान का अथाह प्रवाह था। उत्साह उमंग का एकत्रित आगार उनकी कार्यप्रणाली से ज्ञात होता था। वेदों के भाव से जीवन को सुवासित करने की उनकी प्रभूत इच्छा थी समाज का प्रत्येक क्षेत्र वेद मंत्रों से रंजित हो जाय। वेद तो हमारे जीवन में संबल के रूप में प्रेरणा के रूप में अनुस्यूत हो उनके जीवन का महायज्ञ अनुपम आस्था, से विश्वास से, लगन से, सुवासित था। कितना जन सम्पर्क,ओह! कितना भ्रमण, वेद के मंत्रों ने उनके जीवन में एक गम्भीर अनुभूतियों को वहन करने में समर्थ भाषा और विषय को हृदयंगम कराने वाली प्रसन्न जीवन्त शैली प्रदान की है।

महर्षि दयानन्द जी भरी सभा में जनता से विनम्र प्रार्थना करते थे।

"उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूतिकर्मसु भविष्यतीत्येव मनः कृत्वा सततमव्यथै।।

उठो, प्रवृत्त होकर जागो, चिन्ता रहित चित्त से कल्याण कर्मों में जुटे रहो, प्रभु के प्रति आस्था से यह मान लो कि वे सभी पूर्ण होंगे।

"ऋतम्भरा तस्य प्रज्ञा" महर्षि की प्रज्ञा ऋतम्भरा में आसक्त हो जाती है। वेदों के विशाल ज्ञान सागर को पाकर महर्षि के मुंह से निकला "वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक है।" वेदों के पवित्र ज्ञान में विद्वता, बहुज्ञता, सुलझे हुए विचारों का सार शास्त्र सम्मत सबके लिये प्रकट है। हमारी संस्कृति का आधारभूत तत्व वेदों में सत्य से समाहित है। भारत के ऋषि मुनियों ने परम पिता परमेश्वर से जो विश्व वन्द्य ज्ञान प्राप्त किया है वह सबके लिए अनुकरणीय है।

महर्षि ने अपनी वाणी से इस वेद विद्या का इतना सघन प्रचार किया जो हमारी सभ्यता, संस्कृति का अतीव उच्चतम कमनीय कीर्तिमान बन गया। "वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है।" वेद विरुद्ध सभी शास्त्र कपोल कल्पित हैं। इस एकाकी शिष्य ने इतना घनघोर, वर्चस्वी प्रचार किया कि प्रायः सभी वेद विरुद्ध धर्मावलम्बियों की नींद गायब। अपने इस सत्य प्रचार में महर्षि को अनेक मुसीबतों का सामना करना पड़ा। उनके प्रचार कार्य में सर्वदा बाधायें आईं। लेकिन उन्होंने तनिक भी चिन्ता नहीं की। धर्म के तथाकथित अनपढ़ पण्डितों ने महर्षि के कार्य में सदा रोड़े अटकाये।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सर्वदा अपने गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए वेदों का अनवरत प्रचार किया। यह महर्षि की अपने गुरु के पाण्डित्य की उदारता का परिचायक है। इससे वेदों के भावों की व्याख्या में, प्रभु की भक्ति के निरूपण में वैशिष्ट्य की प्रतीति हुई है। महर्षि वेद विद्या को तत्कालीन समाज में बहुलता से जोड़ना चाहते थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि वेदों के मांगलिक रूप को मानव जीवन से बहुलता में सम्पृक्त किया जाय। वेदों में उल्लिखित मूल सत्य स्वरूप की रक्षा करते हुये समाज के प्रीति व्यवहार में लोक मंगल की भावना को प्रमुखता प्रदान कर भक्तों के कल्याण पथ के प्रवर्तक थे। वेद मंत्रों के मर्म को उन्होंने अपने मस्तिष्क में इतनी सरलता से प्रतिष्ठित किया हुआ था कि अत्यन्त सरल एवं सुलभ रूप से सदा स्वामी जी सुललित वाणी में प्रकट करते थे। धारा प्रवाह में उनका माषण अद्भुत पाण्डित्य, निश्चयकारिणी प्रज्ञा और विवेचन क्षमता से अत्यन्त प्रीतिकर एवं सुखद होता था। वदों की सुखकारिणी विद्या समस्त भावनाओं एवं प्रेरणाओं का स्रोत है। सभी वेदों का वास्तविक अर्थ ईश्वर की सत्ता व ज्ञान का प्रेरणाप्रद भाव है। जीवन की सम्पूर्ण सरसता का नाम ही वेदवाणी है। भारतीय दर्शन का तत्वचिन्तन वेदों में समाहित है।

हमारे तत्वेक्षी ऋषियों ने वेदों की परिपूर्ण विद्या को **"सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म"** से निरूपित किया है। हमारे मनीषियों ने वेद के इस उज्ज्वल संगीत का गान कर मानव के अन्तस को प्रभावित किया है। जीवन का इससे स्पष्ट, सरल सुचिन्तित विचार वेदों के सिवाय अन्यत्र प्राप्त नहीं होता है। यही हमारे सर्वांग सुन्दर मानवीय जीवन का प्रबुद्ध दृष्टिकोण है।

वेदों के शास्त्रीय चिन्तन में हमारी संस्कृति, धर्म, दर्शन अध्यात्म विद्या, कला, साहित्य, समाज, आचार-इस सप्तक में भारतीयों के वास्तविक जीवन के अनूठी मंगलात्मक वृत्ति का विराट एवं विलक्षण स्रोत है।

महर्षि जैसे सूक्ष्मदर्शी विद्वान ने विराट वैदिक मंत्रों में जीवन की भास्वरता का सत्य निरीक्षण किया। वेदों की शब्द क्षमता इतनी अपूर्व, परिबद्ध तथा प्रकर्ष थी। सहृदय दयानन्द सरस्वती को जीवन के उत्कर्ष के लिये अन्तः साक्ष्य दृष्टि से, विरजानन्द गुरु के प्रबुद्ध शिष्य ने वेदों की विद्या के अमूल्य मनोभावों को व्यक्त करने के लिए नितान्त निर्मल प्रभावकारी युग का स्तुत्य सन्देश भारत भूमि को प्रदान कर उज्ज्वल कीर्ति की स्थापना की है। वेदों की अमृत वाणी को "सरस्वती विहार" नाम से अभिहित किया। इसके साथ ही वेदों ही लाघवता से प्रभावित होकर अपने नाम के साथ "सरस्वती" पद को प्रतिष्ठित कर लोकहित भावना को ध्यान में रखकर अपने कल्याण कारिणी श्रद्धाभाव को अभिव्यक्त किया है। "संस्कृत साधना" के क्षेत्र में उनकी भावना दिव्य थी। संस्कृत भाषा का आनन्द उनके वेद विषयक मार्मिक व्याख्यानों में दिखाई देता है। वेदों के उन्नत उदात्त साहित्यिक कृतित्व का अपनी सर्वग्रासी भाषणों के उत्तम उद्धरणों से लक्षित है। महर्षि की वाणी ने सर्वदा निर्भयता और शालीनता के साथ सत्य का उद्घाटन किया है।

वेदवाणी की क्षमता तथा उसकी सर्वांगीण दृष्टि से वर्चस्विता के सदृश कोई भी ग्रन्थ आज तक विश्व साहित्य में प्रकाशित नहीं हुआ है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की लेखकीय साधना तथा सहृदयता अत्यन्त लोहमर्षक तथा प्रभुता पूरित है। वेदशास्त्रों के प्रति महर्षि की शालीनता के साथ-साथ महर्षि का अपना व्यक्तिगत जीवन भी लोकहित एवं सार्वजनिक कल्याण भावना से भरपूर है। महर्षि की साधनामय जीवन पद्धति का प्रमुख कारण वेदमयी वाणी रही है।

गुरु विरजानन्द के सच्चे शिष्य के रूप में स्वर्णिम मनस्वी चरित्र से आपूर्ण वेदों के वास्तविक अर्थ के निर्धारण के रूप में "महर्षि की महनीय मान्यता" राष्ट्रीय जनशक्ति को वेदों की कल्पना के अनुरूप ढालने की उनकी अपरिमित रीति रही है। नैतिक गुणों से भरपूर वैदिक धर्म का मूर्तिमान रूप व्रतों के दृढ़ निश्चयी स्वामी विरले ही होते हैं। इस आधार पर महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन ही लोकोत्तर की उत्तम भावना से परिपूर्ण था। महर्षि की महिमा का आख्यान करते समय एक सत्पुरुष वैदिक योगी के रूप में विशिष्ट चारित्रिक गुणों से सम्पन्न महापुरुष की परिभाषा हमें प्राप्त होती है।

"वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्" प्रभु के प्रख्यात पुरुषों की पंक्ति में महर्षि का नाम सर्वोपरि है। देव दयानन्द के चारित्रिक नैतिक गुणों से परिपक्व सुवासित जीवन में ईश्वरीय गुणों का साक्षात् दर्शन होता है। मानवीय गुणों की पूर्णता में महर्षि दयानन्द का जीवन ही उत्कृष्टता में अनुकरणीय है।

उनके वर्चस्वी जीवन की विशिष्टता के मुख्य अंश निम्न हैं। वे वेद शास्त्रों के प्रकाण्ड ज्ञानी थे। परमपिता परमात्मा के परम भक्त थे। वे जितने समर्थ वक्ता थे, उतने ही सहृदय व्यक्ति थे। वे सभी व्यक्तियों को अपनी प्रियता के बन्धन में आबद्ध करते थे।

भौतिक शरीर को मृत्यु के पंजे में घसीटने वाले जगन्नाथ को भी हृदय से क्षमा करते हुए उनके प्रभावशाली अन्तिम शब्द थे "तेरी इच्छा पूर्ण हो मेरे प्रभु" अपने को विष देने वाले के प्रति उनका उज्ज्वल गुण उसके मंगल के लिए सदा सचेष्ट रहे हैं।

"वैदिक मंगल दिव्य दीप तो बुझा दिया गया" पर उनके तपोमय जीवन की लाघवता है। वेद शास्त्रों की खिल्ली उड़ाने वाले अनभिज्ञ विद्वानों के प्रति उनके हृदय में एक संकट ग्रस्त वेदना थी। कब ये विद्वान वेदों के गम्भीर सुखद विषय से परिचित हो प्रभु की प्रीति परिवार के सदस्य बनेंगे और वेदों में निहित साधारण वास्तविक विद्या को जनता को बता सकेंगे।

उनकी काया की रम्य कान्ति बीत जाने पर भी उनकी कीर्ति, उनके वैदिक प्रभामण्डल की ज्योति धर्म पथ के पथिकों को सर्वदा आलोकित करती रहेगी।

यही "महर्षि की महनीय मान्यता" है।

9 सीतामा कालोनी
पहला मेन रोड़, अलावरपेट
चेन्नई-600018

यज्ञ समिधा

● पण्डित वेदप्रकाश शास्त्री

यज्ञ में समिधाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इनके बिना यज्ञ सम्पन्न ही नहीं हो सकता। हवन छोटा हो या बड़ा, समिधाएं होनी ही चाहिए। जब समिधाएं सम्यक् प्रकारेण प्रज्वलित हो जाती हैं तभी हव्य–पदार्थ समर्पित किए जाते हैं।

यज्ञ में हवि, ईंधन, काष्ठ–खण्डों को समिध या समिधा कहा जाता है। यज्ञ–वेदी में इन काष्ठ–खण्डों को प्रज्वलनार्थ विधिपूर्वक रखा जाता है–

यदेनं समयच्छत् तत् समिधः
समित्तम्।। तै. ब्रा. 2/1/3/8

महर्षि दयानन्द का समिधा–विधान अत्युत्तम, अतिसरल, ग्राह्य एवं व्यावहारिक है। वह सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं–

"चन्दन, पलाश वा आम्रादि के श्रेष्ठ काष्ठों के टुकड़े उसी वेदी के परिमाण से बड़े छोटे करके उसमें रखें।"

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के अन्तर्गत "पञ्चमहायज्ञ" विषय के अनुसार–

"उस वेदी में ढाक वा आम आदि वृक्षों की समिधा स्थापन करके...।"

पञ्चमहायज्ञविधि में महर्षि लिखते हैं–

"पुनः उन्हीं पलाशादि वा चन्दनादि लकड़ियों को वेदी में रखकर...।"

संस्कार विधि के अनुसार–

"पलाश, शमी, पीपल, बड़, गूलर, आम, बिल्व आदि की समिधा वेदी के प्रमाणे छोटी–बड़ी कटवा लेवें। परन्तु ये समिधा कीड़ा लगी, मलिन देशोत्पन्न और अपवित्र पदार्थ आदि से दूषित न हों, अच्छे प्रकार देख लेवें।"

महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट विधि में समिधा की विधि सरल तथा स्पष्ट शब्दों में वर्णित है जिसमें समिधाओं की स्वच्छता का भी ध्यान रखा गया है। वेदी के अनुसार छोटी–बड़ी भी हैं। परन्तु अनेक विद्वानों ने समिधाओं के विषय में भ्रामक, उलझावपूर्ण तथा कठिन नियम बनाने का प्रयत्न किया है। यथा–

श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द सरस्वती त्रिवेदतीर्थ "आर्य संकल्प" सितम्बर, 2013 के अंक में अपने अपने लेख "यज्ञानुष्ठान में आपकी भूलें" में पृष्ठ 16 पर आपकी दूसरी भूल के अन्तर्गत लिखते हैं–

" छिलका रहित फटी हुई समिधाओं का प्रयोग। वास्तव में छिलका सहित, बिना फटी गोल लकड़ी ही समिधाओं के रूप में प्रयोग के योग्य है। क्योंकि छिलके के रोगविनाशक तथा जलवायु की शुद्धिकारक गुणधर्मों को देखकर ही यज्ञ–समिधाओं के लिए विशेष वृक्षों का विधान हुआ है। चन्दनादिक कुछ वृक्ष ऐसे भी हैं जिनके छिलके तथा लकड़ी दोनों ही विशेष उपकारक हैं।"

समीक्षा–1.डॉ. भवानी लाल भारतीय 'वेदवाणी' दिसम्बर, 2001 के अंक में "महर्षि दयानन्द का राष्ट्रवाद" लेख में लिखते हैं–

" युगानुरूप विचारों और व्यवहारों में परिवर्तन करना मनुष्य के लिए सदा श्लाचनीय होता है।"

2. सिद्धान्त की यथार्थता–कोई भी सिद्धान्त शाश्वत नहीं हो सकता। उसे निरन्तर परखे जाने की आवश्यकता है, ताकि वह प्रासंगिक बना रहे।

3. 'वेदवाणी' के सम्पादक विजयपाल विद्यावारिधि "यज्ञ विशेषांक" के सम्पादकीय में पृष्ठ 120 पर लिखते हैं–

"शास्त्रों के नाम पर अनेक प्रकार की धांधलियां चल रही हैं। शास्त्रों का स्वरूप भी परिष्कृत होना चाहिए, तार्किक संगति अनिवार्य हो। द्रव्यों और विधियों में युगानुरूप परिवर्तन भी अपेक्षित है। ऋषि ने कोई बात अन्यथा नहीं लिखी या अन्यथा लिखी है, इतने मात्र से अनुपादेय न मानी जाय–गुण दोष विवेचन के आधार पर निर्णय किया जाय।"

4. परिवर्तन प्रकृति का नियम है। अतः समय के साथ किसी भी वस्तु, विषय और विचार में भिन्नता अथवा परिवर्तन आता रहता है। यदि हम समाज में शान्तिपूर्ण वैचारिक नैरन्तर्य बनाए रखना है तो हमें यथास्थिति की मौलिकता बनाए रखते हुए सीमा के अन्तर्गत उसमें युगानुरूप परिवर्तन के लिए भी अवश्य तैयार रहना चाहिए। क्योंकि परिवर्तनोन्मुख रहकर ही हम वर्तमान के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध एवं सामंजस्य बनाए रखने में समर्थ हो सकते हैं।

युगानुरूप परिवर्तन हेतु उपर्युक्त विद्वानों के विचार प्रस्तुत करने के पश्चात् अब श्री स्वामी जी के कथन पर विचार किया जाता है–

वर्तमान समय में निर्दिष्ट वृक्षों की समिधाओं का सर्वत्र मिलना ही कठिन है। फटी/चीरी हुई समिधाएं ही नहीं मिलतीं। न आम की, न पीपल की। पंजाब में अबोहर, फाजिलका, फिरोजपुर एवं अन्य समीपवर्ती नगरों में विशेष कर। क्योंकि इधर आम के वृक्ष ही नहीं हैं। पीपल का पेड़ कोई हिन्दू काटने को तैयार नहीं। वैसे भी हरे भरे वृक्षों को काटना अपराध है। बड़, बेल, गूलर, शमी के वृक्ष हो सकता है, यत्र तत्र हों परन्तु उनके दर्शन नहीं होते। यहां पर तो 'बेरी' की समिधाओं से ही हवन होता है। बेरी के भी काम आने आने वाले भाग को आरे वाले पहले ही चीरकर रख लेते हैं। शेष बची लकड़ियों के गुटके बनाते बेचते हैं। लकड़ियां बेचने वाले ही कुछ हवन की लकड़ियां कुल्हाड़ी से भी चीर कर रख लेते हैं। जो तीस रुपये किलो बेचते हैं। अब एक–एक किलो की पैकिंग भी बाजार में उपलब्ध है जो तीस रुपये किलो बिकती है। उन पर तो छिलका बिल्कुल होता ही नहीं। गोल होने की कौन कहे, वे तो फट्टे सदृश आयताकार होती है। वह भी पता नहीं किस वृक्ष की हैं? सम्भवतः पुराने दरवाजे, अलमारियां, खिड़कियां, बाले (धन्नी) आदि चीर कर, उन्हीं की किलो–किलो की पैकिंग कर दी जाती है। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि एक स्थान पर हवन करवाते हुए दो–तीन टुकड़े ऐसे मिले जिन पर रंगरोगन किया हुआ था, जो पुराना हो चुका था। चीरते समय ध्यान नहीं रहा और वह रंग लगा हुआ ही पैकिंग हो गया। यह बात फरवरी, 2015 की है।

कोई भी कठिन नियम बना देना सरल है, पर व्यावहारिक रूप देना कठिन है। श्री स्वामी जी ने यह नियम कहां से लिया है? इसका उल्लेख उन्होंने नहीं किया। सम्भवतः कात्यायन स्मृति से ग्रहण किया हो–

नांगुष्ठादधिका ग्राह्या समित–स्थूलतया क्वचित्।
न वियुक्ता त्वचा चैव न सकीटा न पाटिता।।
प्रादेशान्नधिका नोना न तथा स्याद् विशाखिका।
न सपर्णा न निर्वीर्या होमेषु च विजानता।।
अष्टादशस्मृतयः कात्यायन स्मृति

8/17,18 पृ.169

होम के कार्य में अंगूठे से अधिक मोटी और जिस पर त्वचा (छलका) न हो, कीड़े हों, फटी हो, ऐसी समिधा को लेना उचित नहीं।

जो अंगूठे और तर्जनी के प्रमाण से अधिक वा न्यून हो और जिसकी डाली न हो। जिसके पत्ते हों, जो घुनी हो–ज्ञानवान् मनुष्य ऐसी समिधाओं को हवन में न ले।

प्रादेशद्वयमिध्मस्य प्रमाणं परिकीर्तितम्।
एवं विद्याः स्युरेवेह समिधः सर्वकर्मसु।।

कात्यायन स्मृति 8/19

दो उक्त प्रादेश ईंधन (समिधा) का प्रमाण कहा है। सब कर्मों में ऐसी ही समिधाएं होती हैं।

आह्निक सूत्रावली में भी त्वचा रहित समिधा का निषेध किया गया है–

न विनिर्मुक्ता त्वचा चैव।।

1. वस्तुतः स्वामी जी का नियम व्यावहारिक कम और सैद्धान्तिक अधिक है,
2. महर्षि दयानन्द की दृष्टि से कात्यायन आदि स्मृतियां बच नहीं सकी होंगी। वह भी गोल–मटोल, त्वचा रहित समिधा का उल्लेख कर सकते थे। परन्तु उनका उद्देश्य सरलता की ओर जाना था, कठिनता की ओर नहीं।
3. महर्षि ने मनुस्मृति के प्रक्षिप्तांश को छोड़कर उसे ही प्रामाणिक माना है। शेष स्मृतियों को नहीं।

पीपल की समिधा की वेद
ने भी प्रशंसा की है–

अश्वत्थो अमृतं हविः।। अथर्व. 8/7/20

पीपल अमृत रूप हवि है अर्थात् पीपल की समिधा यज्ञ में अमृततुल्य है।

अन्य अनेक ग्रन्थों में भी समिधाओं का विस्तृत उल्लेख है। 'यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान' के रचयिता आचार्य श्री राम शर्मा पृ. 5.29 पर लिखते हैं–

शमी–पलाश–न्यग्रोध–प्लक्ष–वैकंकतोद्भवाः।
अश्वत्थोदुम्बरो बिल्वश्चन्दनः सरलस्तथा।।
शालश्च देवदारुश्च खदिरश्चेति याज्ञिकाः।।

शमी (छोंकर), पलाश (ढाक), वट, प्लक्ष (पाकर), विकंकृत (स्रुवा वृक्ष), पीपल, उदुम्बर (गूलर), बेल, चन्दन, सरल, शाल, देवदारु और खैर यह याज्ञिक वृक्ष हैं। इनकी समिधा होम में लगावे।

पलाशाऽश्वत्थन्यग्रोधप्लक्ष वैकंकतोद् भवाः।
वैतसोदुम्बरो विल्वश्चन्दनः स,रलस्तथा।
शालश्च देवदारुश्च खदिरश्चेति याज्ञिकाः।।
ब्रहम पुराण

ढाक,पीपल, बरगद, पाकर, वैककत, बेत, गूलर, बेल, चन्दन, सरल (पीतदेवदारु), साल, देवदारु, कत्था इनकी लकड़ी यज्ञार्थ कही गई है।

निवासा ये च कीटानां लताभिर्वेष्टताश्च ये।
अयाज्ञिका गर्हिताश्च वल्मीकैश्च समावृताः।।
शकुनीनां निवासाश्च वर्जयेन्तान् महीरुहान्।
अन्यांश्चैवं विधान् सर्वान् यज्ञियांश्च विवर्जयेत्।।
वायु पुराण

कीड़े–मकोड़ों से भरे हुए, लताओं से लिपटे हुए, इमली, कटहल आदि वृक्ष यज्ञ के लिए उपयुक्त नहीं। कांटेदार, दीमकों की बांबी वाले, जिनमें पक्षी रहते हों, ऐसे वृक्षयज्ञ के लिए ग्राह्य हों, तो भी काम में नहीं लेने चाहिए।

डॉ. रामप्रकाश का 'यज्ञ विमर्श' में 'समिधा' प्रकरण के अन्तर्गत पृ.27 पर उद्धरण भी द्रष्टव्य है–

शतपथ ब्राह्मण (1/3/3/20) में समिधा के लिए निम्नलिखित वृक्षों का विधान किया गया है–

यदि पालाशान्न विन्देत्। अथो अपि वैकंकताः स्युः।
यदि वैकंकतान्न विन्देदथो अपि कार्ष्मर्यमयाः स्यु।
यदि कार्ष्मर्यमयान्न विन्देदथो अपि वैल्वाः स्युः।
अथो खदिरा अथो औदुम्बरा एते हि वृक्षाः
यज्ञियास्तस्मादेतेषां वृक्षाणां भवन्ति।।
आह्निक सूत्रावली में–

ढाक (पलाश), फल्गु, वट, पीपल, विकंकत (वंज), गूलर, चन्दन, सरल, देवदारु, शाल, खैर आदि का विधान किया है–

पलाश–फल्गु–न्यग्रोध–प्लक्षाश्वत्थ–विकंकताः।
उदुम्बरस्तथा बिल्वश्चन्दनो यज्ञियाश्च मे।।
सरलो देवदारुश्च शालश्च खदिरस्तथा।
समिदर्थे प्रशस्ताः स्युरेते वृक्षाः विशेषतः।।

अन्य देशों के लिए भी कई विद्वानों ने निर्देश दिए हैं–

इंग्लैण्ड में शाहबलूत (वां), अफगानिस्तान और बिलोचिस्तान में बादाम की लकड़ी, जर्मनी में लैवेण्डर तथा भारत और इटली में यूकेलिप्ट्स (सफेदा), अशोक की लकड़ी समिधा के रूप में प्रयुक्त हो सकती है। इनके अतिरिक्त तत्–तद्–देशीय उपलब्ध कम धुएं वाली, दुर्गन्ध रहित लकड़ियों का प्रयोग किया जा सकता है।

शेष अगले अंक में....

पत्र/कविता

आर्यो सम्भल जाओ अन्यथा पछताओगे

हमारा प्यारा आर्यवर्त (भारत) किसी समय समस्त संसार का स्वामी था। सकल विश्व में भारत की महिमा के गीत गाए जाते थे। संसार भारत को देवभूमि मानकर इसके आगे शीश झुकाता था, वस्तुतः सारे जगत में आर्यों का चक्रवर्ती राज्य था तथा सारी दुनियां के नर–नारी प्रातः उठकर परमात्मा से प्रार्थना करते थे कि हे सकल विश्व के रचने वाले जगदीश्वर ! हमें दूसरा जन्म ऋषिओं की भूमि आर्यवर्त में देने की कृपा करना जिससे हम सब वेदवेता, त्यागी, तपस्वी, ईश्वर–भक्त धर्मात्मा और परोपकारी ऋषियों के चरणों में बैठकर वैदिक ज्ञान प्राप्त करके अपने इस मानव तन को सफल करके मोक्ष की प्राप्ति कर सकें। उस समय आर्यों की समस्त संसार में धाक थी। विद्वान कहते हैं कि उस समय भारत वासी देवता माने जाते थें।

इस देश में सत्यवादी हरिश्चन्द्र अश्वपति, राम, भोज, चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य जैसे ईश्वर–भक्त धर्मात्मा, प्रजापालक सम्राट् थे जो जनता को पुत्र की तरह हृदय से प्यार करते थे। यह क्रम महाभारत काल तक चलता रहा किन्तु महाभारत के युद्ध के पश्चात् यहां वैदिक विद्वानों की कमी हो गई थीं यही नहीं हमारी प्रतिष्ठा आपस की फूट ने खत्म कर दी जिससे यह देश लगभग एक हजार वर्ष तक विधर्मी मुस्लमानों और ईसाइयों के पराधीन रहा जिहोंने यहां रात–दिन भारी अत्याचार किए। विधर्मी लोगों ने हमारे धर्म ग्रन्थ जला दिए तथा लाखों देश–भक्तों की हत्या कराई तथा दुष्टों ने हमारी बहिन–बेटियों का धर्म नष्ट किया।

जगतपिता जगदीश्वर की कृपा से इस देवभूमि में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने टंकारा (गुजरात) में कर्षण जी तिवारी (अम्बाशंकर) के घर माता यशोदा बाई की कोख से जन्म लिया जिनका बालकपन का नाम मूलशंकर था। स्वामी दयानन्द जी ने स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास लिया तथा गुरु विरजानन्द सरस्वती से मथुरा नगरी (उतर प्रदेश) में वेद ज्ञान प्राप्त किया। स्वामी जी ने गुरु देव की आज्ञा मानकार भारत भर में वैदिक प्रचार किया। इस कार्य को करने में उनके सामने भारी विध्न बाधाएं आईं लेकिन वे कभी नहीं घबराए। उन पर ईटें पत्थर वर्षाए गए, गोबर कीचड़ फैंका गया और घातक हमले किए गये।

स्वामी जी ने सबसे पहले पौंगा पंथी पौराणिकों पर हमलां किया तथा स्पष्ट किया कि वेद ही ईश्वरीय ज्ञान हैं। वेदों के विरुद्ध जितने भी ग्रन्थ हैं सब कपोल कल्पित हैं तथा मूर्तिपूजा वेद विरुद्ध है। उन्होंने काशी, मथुरा, हरिद्वार, जगनाथ अमरकोट आदि स्थानों पर जाकर वेदप्रचार करके पाखण्डी लोगों को परास्त किया। इसके बाद मुल्ला–मौलवियों को तथा पोप–पादरियों को शास्त्रार्थ में हराया। स्वामी जी ने अपने महान् ग्रंथ सत्यार्भप्रकाश में तेरहवां व चौदहवां समुल्लास ईसाइयों व मुस्लमानों को झूठा व पाखण्डी प्रमाणित करते हुए लिखे। बौद्ध और जैनमत का खण्डन किया। उस समय उनसे कोई भी विधर्मी विजय प्राप्त न कर सका। वस्तुतः वे अजेय योद्धा माने गए। संसार उन्हे श्रद्धा से याद करता है।

स्वामी जी ने घोषणा की कि संसार में कर्म ही प्रधान है। जो व्यक्ति जैसा कर्म करता है ईश्वर उसे वैसा ही फल देता है। उन्होंने वेदों के प्रमाण देते हुए ईश्वर का निराकार सर्वव्यापक, अजन्मा अनादि, अनुपम, सर्वज्ञ, अजर, अमर, न्यायकारी, दयालु, बताया तथा दृढता पूर्वक कहा कि ईश्वर कभी अवतार नहीं लेता क्योंकि वह सर्वशक्तिमान है इसलिए उसे जन्म धारण करने की जरूरत नहीं है।

स्वामी जी ने जन्म–जाति को गलत बताया तथा घोषणा की कि जो व्यक्ति ब्राह्मण के घर में जन्म लेकर वेद विरुद्ध कार्य करता है वह शूद्र से भी नीची कोटि में चला जाता है तथा संसार में दुष्ट की पदवी पाता है तथा जो व्यक्ति शूद्र के घर जन्म लेकर भी अच्छे कर्म करके विद्वान, ईश्वर–भक्त बन जाता है वह ब्राह्मण की पदवी पाता है।

स्वामी जी ने गऊ को माता बताया तथा गोकरूणा निधि लिखकर व स्वेदेशी राज्य को सुखदाई बताया। उन जैसा त्यागी तपस्वी ईश्वर–भक्त धर्मात्मा, सदाचारी, तपधारी, साधु संसार में अब तक कोई नहीं आया। आर्यो, आपस की लड़ाई बंद करो, वेद प्रचार करके संसार का काया कल्प कर दो अन्यथा पछताते रह जाओगें। मेरी सबसे यही प्रार्थना है।

आर्यकुमारो ! विश्व में,
करो वेद प्रचार।
देव पुरुष बनकर करो,
जगती का उद्धार।।
याद रखो संसार में,
जो करते शुभ कर्म ।
वही पालते हे सुनो,
पावन वैदिक धर्म।

पं. नन्दलाल 'निर्भय'
आर्यसदन, बहीन, जनपद पलवल (हरियाणा)
09813845774

****

भक्ति कर्म हो ज्ञानमय तभी योग कहलाय

गर चाहे आनन्द तू, अपने भीतर खोज।
बाहर भटके नहि मिले, तेरे मन को मौज।।

सब जीवों को ईश ने, साधन दिये अपार।
मानव का तो योग से, होता बेड़ा पार।।

तेरा मेरा मिलन ही, सदा योग कहलाय।
सारे दुरगुण दूर हों, मिलन तभी हो पाय।।

मन में गर कूड़ा भरा, सद्गुण कैसे आय।
पहले मन को साफ कर, समझ तभी कुछ पाय।।

कर्म अगर हो ज्ञानमय, भक्ति वही बन जाय।
भक्ति कर्म हो ज्ञानमय, तभी योग कहलाय।।

कोमल जल की धार से, टूट जात चट्टान।
करत करत जस योग से, मूर्ख पावें ज्ञान।।

बालक का कोमल हिया, छल छन्दों से दूर।
जग वालों से सीखता, छल कौतुक भरपूर।।

जो कुछ तेरे पास है, मान ईश आभार।
दिया नहीं जो ईश ने, उसका दुःख बेकार।।

जन्म लेत ही आदमी, होता नहीं महान।
रैन तिमिर के बाद ही, आता नवल विहान।।

बात बात की बात में, बढ़ जाती है बात।
तोल मोल कर बोलिये, बनती बिगड़ी बात।।

नरेन्द्र आहूजां 'विवेक'
602, जी एच 53, सैक्टर20,
पंचकूला (हरियाणा)

पाँच अंगुलियों में राष्ट्रीय एकता

हाथ की पाँच अंगुलियाँ भौतिक पाँच तत्वों की प्रतीक हैं और राष्ट्र की एकता को दर्शाती हैं।

(1) **अंगूठा** (THUMB) अग्नि का प्रतीक है। देश का राष्ट्रपति है। हस्ताक्षर द्वारा स्वीकृति प्रदान करता है।

(2) **तर्जनी** (Index Finger) वायु का प्रतीक है। संकेत द्वारा मार्ग दर्शन का काम करती है। चेतावनी देती है। शिक्षक होने के नाते ब्राह्मण है।

(3) मध्यमा (Middle) आकाश का प्रतीक है। क्षत्रिय का काम करती है।

(4) अनामिका (Ring Finger) जल का प्रतीक है। इस से तिलक लगाते हैं। यह वैश्य का काम करती है। वित्त विभाग अध्यक्ष है।

(5) कनिष्ठिका (Little Finger) यह पृथ्वी तत्व का प्रतीक है। शूद्र सेवा तथा मल निकालने का काम करती है।

याद रखो– जब शरीर रूपी राष्ट्र पर कोई आपत्ति आती है तब सब एक होकर आती हैं मुक्का बना लेती हैं। राष्ट्र रक्षा के लिये शुत्रु से लड़ती हैं।

देवराज आर्य मित्र
WZ 428 हरी नगर नई दिल्ली

****

☞ पृष्ठ 07 का शेष

ईश्वर, जीव और प्रकृति...

रहेगा, और जब संसार में रहते हुए ईश्वर के तरफ ध्यान देगा तभी योगांगों द्वारा वह स्वःस्वर्गरूप आनन्द को प्राप्त करेगा।

प्रश्न–माता–पिता के अनुसार ही गर्भ में शिशु का सर्वांग बनता है, और जब जन्म लेकर बालक बड़ा होता है तो उसका मन, बुद्धि–मेधा और चेतना का उपज मस्तिष्क के स्नायु मण्डलों से ही होता है। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों का सम्बन्ध भी मस्तिष्क की करोड़ों स्नायु कोशिकाओं से लगा रहता है। अतः उन सबका केन्द्र भौतिक मस्तिष्क ही है आत्मा नहीं। इस विषय में आपका क्या कहना है? उत्तर–अमैथुनी काल में मानव उत्पत्ति के पूर्व, कोई नहीं जानता था कि स्त्री–पुरुष का सांचा किस डिजाइन के अनुसार बनाया जायेगा। किन्तु कोई सर्वज्ञ (परम माता पिता के समान) अहश्य में विद्यमान था, तभी तो पंचतत्वों के सूक्ष्म भूतों तथा सूर्य–चन्द्र एवं दो भिन्न शक्तियों के गुणानुसार स्त्री और पुरुष का पहले सूक्ष्म शरीर में आकृति बनाया, उसके पश्चात अनेक प्रकार के रासायनिक तत्वों एवं सूर्य के प्रकाश से जब हजारों वर्षों में 'रज–वीर्य' जैसे उपादान बन गये तब सूक्ष्म शरीर के साथ आत्माओं के संयोग से, उन दोनों के एकत्रित हो जाने पर अनेक स्त्रीलिंग और पुल्लिंग के भ्रूण उत्पन्न हो गये और वे भूमिमाता की कुक्षी से रस प्राप्त कर पलने लगे, उसके पश्चात् नर और नारी शिशु रूप में पैदा होकर पेटकुनिया सरकने लगे और पास में मौजूद फलों के रस को प्राप्त कर, हाथ–पैरों से चौपाया–चलने लगे, उसके पश्चात् बालक–बालिका बढ़ कर युवा–युवती सब तिब्बत के आसपास विचरने लगे।

इसी विषय को संक्षेप में 'वेद ही ईश्वरीय ज्ञान' में इस प्रकार लिखा गया है–'नर–नारी के संयोग के बिना ही जो शरीर धारण करते हैं उसे अमैथुनी सृष्टि कहते हैं। ईश्वरीय व्यवस्थानुसार 'रज–वीर्य' के मूलतत्वों के किसी विशिष्ट आवरण में इकठ्ठा होने पर देह रचना आरम्भ हो जाती है। कालान्तर में देह परिपक्व हो जाने पर आवरण फट जाते हैं और बने बनाये शरीर बाहर आ जाते हैं। यह ऐश्वरीय सृष्टि कहाती है। तत्पश्चात् सजातीय प्रजनन का क्रम चालू हो जाता है, और साँचे में ढल–ढल कर नित्य नये शरीर बनने लगते हैं। परमेश्वर ने जीवात्मा को नहीं बनाया अपितु उनके देह को बनाया।'

अतः स्त्री–पुरुष के विज्ञान संगत शरीर का निर्माण आत्मा के ज्ञातृत्व, कर्तृत्व और भोक्तृत्व के लिये ज्ञान स्वरूप परमात्मा के नियम द्वारा, मस्तिष्क की रचना भी अपने लिये नहीं आत्मा के लिये बना ताकि उसके द्वारा वह सोच–विचार और स्मरण कर सके। माना कि मन, बुद्धि, चेतना स्नायुओं का उपज मस्तिष्क है, तो उन साधनों से उनका भोग और सुख दुःखों का अनुभव कौन करता है? देखिये आम को उत्पन्न करने वाला आम का वृक्ष है, पर उसका भोग (आम नहीं) मनुष्य करता है। इसी प्रकार शरीर में जितने साधन बने हैं वह सब सूक्ष्म शरीर से आत्मा के लिये बने हैं।

मु. पो.–मुशरई, जिला–वीरभूम,
(प. बंगाल) 731219
मो. 8158078011

यज्ञ की महिमा को समझें, यज्ञ केवल हवन नहीं

● भारतेन्दु सूद

यज्ञ शब्द का अर्थ है त्याग व दान अर्थात् कल्याण व परोपकार का कार्य। 'यज्ञो' वै श्रेष्ठ तमं कर्म कहकर वेद मनुष्य को अग्नि की लपटों के सामान निरन्तर ऊँचा उठने, प्रकाशवान बने रहने तथा अग्नि के समान तेजस्वी बने रहने का सन्देश देते हैं।

यज्ञ का मूल अर्थ है त्याग व दान। श्रेष्ठ कर्म जिस में दूसरों का उपकार हो उसे यज्ञ कहा गया है। यज्ञ का मूल है त्याग।

भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं कि– जो व्यक्ति बिना यज्ञ किए भोजन करता है वह अन्न नहीं पाप खाता है।

जिस यज्ञ की बात वेद में की गई है या श्री कृष्ण गीता में कर रहे हैं उसका अर्थ हवन नहीं जैसा कि आम व्यक्ति समझता है, अपितु अपने और दूसरों के भले के लिए किया गया प्रत्येक कार्य यज्ञ है। स्कूल, कालेज, अस्पताल बनाना, पानी के साधन बनाना, कारखाना लगाना जिस में दूसरों को रोजगार मिले, चाहे आप कितने भी व्यस्त हैं अपने माता–पिता के लिए समय निकालना, असहाय व्यक्ति की सहायता करना आदि।

अर्थात् जिस कार्य द्वारा आप त्याग व दान करके दूसरे असहाय व्यक्ति या समाज के ऐसे वर्ग का भला करते हैं जो कि मनुष्य का जीवन जीने से वंचित हैं उसे यज्ञ कहते हैं। उदाहरण के लिए रक्तदान जिस में किसी अनजान व्यक्ति का जीवन बचता है सबसे ऊँचा यज्ञ है।

उपनिषद में मनुष्य के जीवन को ही यज्ञ कहा गया है। अर्थात् जीवन तभी है अगर यज्ञमयी है। इस की तीन दिशाऐं है। दीक्षा, उपसदा व दक्षिणा। दीक्षा का अर्थ है तपना–कष्ट व क्लेश सहन करना। जो यज्ञ करना चाहता है उस में दीक्षा का होना जरूरी है। दूसरे की सहायता करनी है चाहे मुझे स्वयं कुछ त्याग करना या दुख सहना क्यों न पड़े। वह यज्ञ सबसे उत्तम है जिस में अपना त्याग करके जरूरतमंद की सहायता की जाये। उपसदा का अर्थ है– त्यागमय ढंग से भोगना। अर्थात् सब सुखों के होने पर भी, दिल में जो दुःखी व असहाय है उनके लिए स्थान होना व उनकी सहायता के लिए तत्पर रहना। दक्षिणा का अर्थ है दूसरों के कल्याण के लिए अपना समय, अपनी सम्पत्ति, तन, मन व धन लगा देना।

जिन पांच यज्ञों का मनुष्य को दैनिक जीवन में पालन करने के लिए कहा गया है वे हैं–

(1) **ब्रह्म यज्ञ**– प्रातः काल में उपासना द्वारा परमात्मा, जो कि हमें प्राण देता है, पालता है व रक्षा करता है, का धन्यवाद करना व श्रेष्ठ बुद्धि के लिए व सारे प्राणी जगत की सुख शान्ति के लिए प्रार्थना करना।

(2) **अग्नि होत्र**– अग्नि होत्र द्वारा पर्यावरण को शुद्ध करने के साथ–साथ अग्नि की लपटों के समान निरन्तर ऊँचा उठने, प्रकाशवान बने रहने तथा अग्नि के सामान तेजस्वी बने रहने के लिए प्रभु की स्तुति करना।

(3) **पितृ यज्ञ** – घर में माता–पिता, दादा–दादी, नाना–नानी व दूसरे बुजुर्गो की सेवा करना।

(4) **अतिथि यज्ञ**– घर में आये अतिथि व विद्वान की सेवा करना।

(5) **बलिवैश्व यज्ञ**– जो समाज में असहाय है उनकी सेवा व सहायता करना।

यहाँ यह समझने की बात है कि यह पांच यज्ञ मनुष्य के स्वयं के लिए है और उसे स्वयं करने के लिए कहा गया है। उदाहरण के लिए पितृ यज्ञ– घर में माता–पिता, दादा–दादी, नाना–नानी व दूसरे बुजुर्गो की सेवा करना। यह यज्ञ, यज्ञ तभी है अगर स्वयं किया जाये और तभी यज्ञ का फल मिलेगा। यह बात सभी पांच यज्ञों पर लागू होती है, चाहे ब्रह्म यज्ञ है या फिर हवन।

अक्सर प्रश्न किया जाता है कि कौन सा यज्ञ सबसे महत्वपूर्ण है। इस का जबाव यह है कि यज्ञ तो सभी महत्वपूर्ण हैं पर अगर आप किन्हीं कारणों से सभी नहीं कर सकते तो दो यज्ञ जो हमें हर हालत में करने चाहिएँ वे हैं–

ब्रह्म यज्ञ–प्रातः काल में उपासना द्वारा परमात्मा, जो कि हमें प्राण देता है, पालता है व रक्षा करता है का धन्यवाद करना व श्रेष्ठ बुद्धि के लिए व सारे प्राणी जगत की सुख शान्ति के लिए प्रार्थना करना व दूसरा

पितृ यज्ञ – घर में माता–पिता, दादा–दादी, नाना–नानी व दूसरे बुजुर्गो की सेवा करना। इन दोनों यज्ञों के किए बिना व्यक्ति कृत्घ्न की श्रेणी में आ जाता है व उसे सब कुछ भौतिक प्राप्त करके भी कभी खुशी नहीं मिल सकती।

आज के संदर्भ में अग्निहोत्र जिसे हम हवन भी कहते है, का क्या महत्व है?

संसार में हर चीज समय के साथ बदल रही है, समय के साथ व परिस्थितियों के साथ हर चीज़ का महत्व आंका जाता है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति ईश्वर की भक्ति, ब्रह्म यज्ञ में तो लिप्त है पर माता–पिता की अवहेलना की हुई है तो समझदार व्यक्ति उसे यही कहेगा कि माता–पिता की सेवा अर्थात् पितृ यज्ञ को भी उतना ही महत्व दे जितना कि आप ब्रह्म यज्ञ को दे रहे हैं। इसी तरह आज के समय में जब हम लाखों वाहनों द्वारा पर्यावरण को इतना दूषित कर देते हैं उस में हवन पर्यावरण के सुधार के लिए उपयोगी नहीं रह जाता। हर चीज, हर दवाई एक सीमा के अन्दर काम कर सकती है।

वही हवन भक्ति में आता है जिसे आप समझकर स्वयं करते हैं व जिस के द्वारा आप ईश्वर से जुड़ते हैं।

आम व्यक्ति के लिए दिन में आधा घंटा ईश्वर के साथ जुड़ने के लिए बहुत है, आप कैसे भी जुड़ें, अगर आप हवन द्वारा ईश्वर से जुड़ जाते हैं तो अवश्य हवन करें और दो समय करें। सदैव याद रखें ईश्वर की स्तुति सदा शांत वातारण में होती है व अपनी भाषा में होती है। यह मन व भावना का विषय है, शरीर व भाषा का नहीं।

प्रश्न– सामान्यता यज्ञ के नाम पर हवन की ही बात क्यों होती है?

इसका कारण यह है कि बाकी सभी यज्ञों में व्यक्ति को अपने को तैयार करना पड़ता है, तप और त्याग करना पड़ता है, आन्तरिक शुद्धि करनी पड़ती है। माता–पिता की सेवा अपने सुखों के त्याग से होती है। अतिथि व असहाय की सेवा के लिए भी कुछ त्याग जरूरी है। ब्रह्म यज्ञ के लिए आन्तरिक शुद्धि की आवश्यकता है, इसके बिना प्रभु से सम्पर्क नहीं होता। परन्तु मात्र हवन करना एक आसान रास्ता दिखता है सो अपना लिया जाता है।

231/45–ए, चंडीगढ़

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 03-04 \02 \2016
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39\57

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कोटकपूरा ने मनाया वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह

डी ए.वी. पब्लिक स्कूल कोटकपूरा ने वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह बहुत ही धूमधाम और उल्लास से मनाया। इस अवसर पर डी.ए.वी. प्रबंधक कर्त्री समिति के प्रधान श्री पूनम सूरी के सलाहकार श्री एच. आर. गंधार और प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री और समाज सेविका श्रीमती सुदेश गंधार विशेष रूप से पधारे। मुख्य अतिथि का हार्दिक स्वागत और अभिनंदन किया गया। उसके बाद मुख्य अतिथि ने महात्मा हंसराज ब्लॉक का उद्घाटन किया। प्राचार्या मीना मेहता के मुख्य अतिथि का स्वागत और हार्दिक अभिनंदन किया और विद्यालय की उपलब्धियों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि डी.ए.वी. कोटकपूरा एक ऐसी संस्था है जिसने समाज को डॉक्टर, इंजीनियर और प्रशासनिक अधिकारी दिए हैं और आज भी दे रहा है। सी.बी.एस.ई. द्वारा किए गए विश्लेषण में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कोटकपूरा ने उत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया।

रंगारंग कार्यक्रम में किंडर गारटन द्वारा नन्हें मुन्हें बच्चों ने, धडक धडक, हरियाणवी, राजस्थानी नृत्य और मल्वई गिद्धे से दर्शकों को मोहित कर दिया। प्राइमरी कक्षाओं द्वारा पहली से पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने माँ, फिर भी दिल है हिन्दोस्तानी, देश मेरे आदि कार्यक्रमों द्वारा देश भक्ति का संदेश दिया। सैकंडरी कक्षाओं द्वारा 'माइम एक्ट' द्वारा पानी बचाने का संदेश दिया गया' 'मैंटल एक्ट' द्वारा मानसिक विकलांग बच्चों की स्थिति देखकर दर्शकों की आँखें नम हो गई। पंजाबी संस्कृति से सुगंधित नृत्य 'हुल्ले हुलारे', राजस्थानी नृत्य: मेरा अस्सी कली का घाघरा, मेरे ढोलना ने दर्शकों को झूमने पर मजबूर कर दिया। विद्या के क्षेत्र पर उच्च स्थान, प्राप्त करने वाले छात्रों को स्मृति चिन्ह और मैडल देकर सम्मानित किया गया।

मुख्य अतिथि ने इस अवसर पर कहा कि अभिभावक अपने बच्चों को कठिन परिश्रम की आदत नहीं डालते। छात्रों को चुनौती स्वीकार करने का अभ्यास होना चाहिए। अभिभावकों को अपनी जिम्मेदारियों का अहसास होना चाहिए। अध्यापकों को अपनी प्रतिभा दिखाकर छात्रों के मस्तिष्क का विकास करना चाहिए। उन्होंने अनेक उदाहरण देकर कहा कि हर क्षेत्र में भारतीय ही प्रथम स्थान प्राप्त करते रहें हैं। अध्यापकों को छात्रों की जिज्ञासा को शान्त करना चाहिए। उन्होंने भारतीय संस्कृति अपनाने पर जोर दिया।

धन्यवादी भाषण में श्रीमती सतवंत कौर मुल्लर ने कहा कि डी.ए.वी. संस्थाएँ समाज को अच्छे नागारिक दे रही हैं। उन्होंने सी.बी.एस.ई. द्वारा किए गए विश्लेषण में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कोटकपूरा ने उत्कृष्ट स्थान प्राप्त करने पर प्राचार्या सूश्री मीना मेहता ओर अध्यापकों को बधाई दी।

डी.ए.वी. नाभा के छात्रों ने "श्रद्धानन्द बलिदान दिवस" पर की गौ सेवा

डी ए.वी. सैंटनरी पब्लिक स्कूल नाभा एवम् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा पंजाब के तत्वावधान में स्वामी श्रद्धानन्द जी के 89 वें बलिदान दिवस का आयोजन किया गया।

विद्यालय की प्रातः कालीन सभा में विद्यालय के छात्रों ने स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए बताया की किस प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन महर्षि दयानन्द जी के दर्शन मात्र से बदला जिसके बाद वे नास्तिक से आस्तिक बने व अपना सारा जीवन आर्य जगत व देश को समर्पित किया। विद्यालय के अध्यापक रोहित शास्त्री ने बताया की कैसे स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने जीवन में बुराईयों को छोड़कर एक सच्चे सन्यासी का जीवन धारण किया।

उन्होंने कहा 1901 में स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना करके लुप्त हो चुकी गुरुकुल परंपरा को पुनः स्थापित किया। वे केवल एक मात्र संन्यासी थे जिन्होंने मस्जिद में खड़े होकर भाईचारे व प्रेम का पाठ संसार के लोगों को दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने पूरे भारत में शुद्धि आंदोलन चलाया। और अपना सारा जीवन वैदिक धर्म के लिए बलिदान कर दिया। उनके बलिदान दिवस के अवसर पर विद्यालय के छात्रों ने नाभा नगर में स्थित गोशाला में यज्ञ किया जिसको विद्यालय के धर्माचार्य रोहित शास्त्री ने पूर्ण करवाया जिसमें विद्यालय के अन्य अध्यापकों ने साथ मिलकर यज्ञ में पूर्णाहुति देते हुए गो सेवा का प्रण लिया व सभी छात्रों और उनके अध्यापकों ने गौशाला में सेवा की।

प्रधानाचार्या मंजुला सहगल ने सभी से कहा की वे भी स्वामी श्रद्धानन्द जी की तरह अपनी सारी बुराइयों को छोड़ कर अच्छाइयों को जीवन में धारण कर लोगों के लिए प्रेरणास्रोत बनकर अपने माता पिता व बड़ों का नाम रोशन करें। साथ ही स्वामी श्रद्धानन्द जी के बलिदान दिवस के अवसर पर सभी अध्यापकों व छात्रों ने स्वामी श्रद्धानन्द जी को शत् शत् नमन किया।

डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अबोहर में रक्तदान शिविर का आयोजन

अ बोहर में आर्य युवा समाज तथा एन.एस. एस. विभाग द्वारा को कॉलेज प्रांगण मे रक्तदान शिविर का आयोजन किया गया। इसकी जानकारी आर्य युवा समाज के इंचार्ज श्री विनीत खुँगर जी ने बताया कि समय-समय पर डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति, नई दिल्ली के दिशानिर्देशानुसार इस तरह के शिविरों का आयोजन किया जाता रहता है। रक्तदान से पहले विद्यार्थियों के ब्लड ग्रुपों की जाँच की गई। इस शिविर में बी. एड, एम.एड. तथा ई.टी.टी. के कुल 60 विद्यार्थियों ने बड़े उत्साह से रक्तदान किया। कॉलेज के प्रवक्ता मैडम रीमा पाहुजा, सिम्पल कम्बोज तथा हरप्रीत कौर ने भी रक्तदान किया। इस मौके पर कॉलेज की कार्यवाहिका प्राचार्या डा. (श्रीमती) उर्मिल सेठी जी ने कॉलेज में रक्तदान शिविर का इतिहास प्राचीन है। उन्होंने कहा कि रक्तदान करने से किसी व्यक्ति की जान बच सकती है तो इससे उर्मिल सेठी, आर्य युवा समाज के इंचार्ज श्री विनीत खुँगर, अर्शदीप सिंह तथा श्यामसुंदर स्मृति चिन्ह देकर उनका ध्यानवाद किया गया। रक्तदान आदि वितरित किए गए। आगामी गतिविधियों के आयोजन की रिपोर्ट आपको भेजी जाती रहेगी।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक - **पूनम सूरी**